कवि विद्यापतिठाकुरकृत

कीर्तिगाथा
एवं
कीर्तिपताका

(विशुद्ध मूलग्रन्थ,
संस्कृत छायानुवाद एवं
हिन्दी-मैथिली व्याख्या)

डॉ० शशिनाथ झा



कवि विद्यापतिठाकुरकृत

कीर्तिगाथा एवं कीर्तिपताका

(विशुद्ध मूलग्रन्थ, संस्कृत छायानुवाद एवं हिन्दी-मैथिली व्याख्या)

सम्पादक व्याख्याकार छायानुवादक

डॉ० शशिनाथ झा

भूतपूर्व प्राचार्य एवं विभागाध्यक्ष,
व्याकरण विभाग,
कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय,
दरभंगा (बिहार)

2020 ई०

कवि विद्यापतिठाकुरकृत कीर्तिगाथा एवं कीर्तिपताका

(विशुद्ध मूलग्रन्थ, संस्कृत छायानुवाद एवं हिन्दी-मैथिली व्याख्या)

सम्पादक- पं. श्री शशिनाथझा

ड्यौढ़ी पश्चिम,
शुभङ्करपुर, दरभङ्गा- 846006
मो. 9199475909

प्रकाशक : भवनाथ झा

संस्करण : ई-बुक संस्करण, 2020 ई.

मूल्य : 20 रुपये मात्र

विषय सूची (1)

विषयसूची (2)

घटनाक्रम अनुच्छेद के क्रम से

(ख) श्रीकृष्ण के द्वारा नायिकाओं के साथ विहार- 15-39

(ग) मुग्धा नायिका के साथ विहार- 23, 24, 35

(घ) केलिवर्णन- 27.28

(ङ) श्रीकृष्ण का एक साथ सभी नायिकाओं के साथ विहार- 29, 30, 31

(च) उद्दाम केलि- 32, 33

(छ) केलि की समाप्ति पर नायिका की दशा का वर्णन-26-39

3. **कीर्त्तिपताका-**

1. घोरयुद्ध (साहिबान = साहब लोगों का शिवसिंह के साथ)-1-5
2. निशिपा खाँ (नशिबुद्दीन खाँ) का रण से पलायन एवं राजपूतों द्वारा उसका खदेड़ना (प्रथम युद्ध समाप्त)- 6-10
3. पराजित सेना का सुलतान के शरण में जाना-11
4. वहाँसे कुपित सेना का आक्रमण- 12, 13
5. पराजय सुनकर सुलतान का चौंकना एवं चतुरंगी सेना भेजना-14
6. सुलतानी सेना का प्रयाण- 15 से 19
7. सुलतान का क्रोध, सुरुतानी आक्रमण- 19-20
8. महाराजाधिराज शिवसिंह का पराक्रम एवं युद्ध में आना-20
9. गौडेश का भयभीत होना-21
10. शिवसिंह का स्वयं सैन्यसञ्चालन करना एवं युद्ध का आदेश- 21, 22
11. राजपूतों का युद्ध में उतरना (सेनापति सुरजू)- 23, 24, 25
12. विक्रम खान एवं ईसर द्वारा राए सिवसिंह के तरफ से युद्ध करना-26
13. सोमनाथ, जिवाइ, सरब सिंह, कुमर, हरिपाल दास का युद्ध करना- 27, 28
14. शिवसिंह के पक्ष के प्रमुख 16 वीरों का वर्णन- 29-34
15. जसराज खाँ कुद्ध होकर बाण चलाने लगा- 35, 36
16. तुर्कों का आक्रमण- 37
17. शिवसिंह अपने सभी भाइयों के साथ आ धमके- 37-41

भूमिका

कीर्तिपताका का हस्तलेख

विद्यापतिकृत कीर्तिपताकाक का एकमात्र हस्तलेख मिथिलाक्षर में लिखित तालपत्र नेपाल राजकीय हस्तलेखागार, काठमाण्डू में है।

इसमें ग्रन्थ पूर्ण नहीं है। परीक्षण करने पर इस हस्तलेख में छोटे-छोटे तीन स्वतन्त्र ग्रन्थ सिद्ध हुए हैं–

1. **भीषम कवि कृत एक प्रबन्धकाव्य** जो संस्कृत एवं अवहट्ठ में है– यह तालपत्र का केवल प्रथम पृष्ठ है जिसे दूसरे पृष्ठ से कोई सम्बन्ध नहीं है। मंगलाचरण शिव, भारती एवं गणपति स्तुति, सज्जन प्रशंसा और दुर्जननिन्दा के आगे दो अक्षर 'तद्द' के बाद पत्र का अन्त हो जाता है और दूसरा पत्र एक संस्कृत श्लोक के अन्तिम अंश से शुरू होकर गणपति वन्दना प्रस्तुत करता है। अतः इस ग्रन्थ का आरम्भ मात्र उपलब्ध है। भीषम कवि के नाम का उल्लेख है।

(2) **कीर्तिगाथा–** तालपत्र के दूसरे पत्र से सातवें पत्र तक यह ग्रन्थ है जिसमें अर्जुन राए की यशोगाथा के साथ 'हरिकेलि' का वर्णन है। इस ग्रन्थ का पहला पत्र एवं सातवें पत्र के बाद का अंश अनुपलब्ध है । इसमें संस्कृत एवं अवहट्ठ भाषा का प्रयोग हुआ है। इसके रचयिता नवजयदेव कवि विद्यापति हैं।

(3) **कीर्तिपताका–** तालपत्र के 30 से 38 पत्र तक विद्यापतिकृत कीर्तिपताका है जिसका आदि अंश खण्डित है। उपलब्ध अंश चतुर्थविलास मात्र है जिसमें भी आदि भाग नहीं है। इसमें राजा शिवसिंह की यशोगाथा है। उनका बंगाल के सुलतान से युद्ध में विजय का वर्णन इसमें है।

कीर्तिपताका के हस्तलेख के सम्पादन कार्य को पं० खुद्दी झा ने प्रारम्भ किया था, परन्तु अपने पाठोद्धार से वे स्वयं सन्तुष्ट नहीं थे। अतः उसका प्रकाशन नहीं हुआ किन्तु उनके संशोधन का उपयोग हमने 1992 में किया था।

इस ग्रन्थ का प्रथम प्रकाश्न म०म० डॉ० उमेश मिश्र के सम्पादकत्व में इलाहाबाद से 1960 में हुआ था, परन्तु अपटु प्रतिलिपिकार से प्राप्त ग्रन्थ रहने के कारण इसका पाठ बहुत विकृत रह गया। 1973 में डॉ० वीरेन्द्र श्रीवास्तव ने इस के ताल पत्र 1 से 7 तक के पाठोद्धार का प्रयास किया था, फिर भी बहुत अंश गड़बड़ ही रह गये। 1987 में मान्य विद्वान् पं० गोविन्द झा के सहयोगी के रूप में मैंने पाठोद्धार का यत्न प्रारम्भ किया। इसके मूल तालपत्र ग्रन्थ की फोटो कापी दो स्थानों पर थी–

(1) विश्वविद्यालय मैथिली विभाग, दरभङ्गा में, जिसके विभागाध्यक्ष डॉ० शैलेन्द्र मोहन झा थे। उन्होंने स्वयं इसके सम्पादनकार्य का भार उठाया था, इसलिये मेरे आग्रह पर भी ग्रन्थ के फोटोकापी का दर्शन न होने दिया। परस्पर सहयोग को भी उन्होंने अस्वीकार कर दिया। परिणाम यह हुआ कि आगे उनके सम्पादन में बहुत अशुद्धियाँ रह गयीं और कुछ मेरे संस्करण में भी पड़ी रहीं।

(2) बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना में, जिसके हस्तलेख प्रभारी पं० हेमचन्द्र झा ने कीर्तिपताका के हस्तलेख की फोटो कापी देखने की सुविधा दी और हम बहुत अंश में पाठोद्धार करके विस्तृत भूमिका सहत 1992 में नाग प्रकाशक, जवाहर नगर, दिल्ली–7 से प्रकाशित करबाया। इसके सम्पादक पं० गोविन्द झा एवं अनुवादक मैं था।

डॉ० शैलेन्द्र मोहन झा द्वारा सम्पादित व्याख्यायित कीर्तिपताका 1998 में साहित्य अकादमी, नई दिल्ली से प्रकाशित हुई। यद्यपि इसमें बहुत पाठोद्धार नहीं हो सका, फिर भी पन्द्रह–बीस स्थल में हमें बहुत महत्त्वपूर्ण पाठोद्धार उसमें मिला जो हमारे सम्पादित संस्करण में व्यवस्थित नहीं हो सका था। बाद के अध्ययन–मनन से भी कुछ पाठोद्धार का अनुगम मैंने किया। तदनुसार प्रस्तुत परिष्कृत संस्करण आवश्यक प्रतीत हुआ।

इस संस्करण में मैंने पाठभेद संग्रह को छोड़ दिया, क्योंकि सामान्य पाठक के लिए वह भारस्वरूप हो जाता है और उसके जिज्ञासु पूर्वोक्त दोनों संस्करणों को उसके लिये देख सकते हैं।

तीनों ग्रन्थों का सारांश

चूँकि यहाँ सन्दर्भित तालपत्र के तीनों ग्रन्थों को रखा गया है, अतः क्रमशः तीनों की विषयवस्तु को प्रस्तुत की जा रही है-

1. **भीषम कवि कृत काव्य**- इसका नाम अज्ञात है। शिव, भारती और गणपति की स्तुति, सज्जनप्रशंसा और दुर्जननिन्दा ही इसमें अवशिष्ट है। अतः इसके विषयवस्तु को कहना सम्भव नहीं हैं।

2. **कीर्तिगाथा**- इसमें गणेशस्तुति के बाद विषय प्रस्ताव है जिसमें अर्जुन राए की गाथा गाने की चर्चा है। इसके बाद इस काव्य के कवि, शृंगार रस और कथानायक जगत सिंह का उल्लेख है। ज्ञातव्य है कि जगत सिंह और जगत खाण अर्जुन राय का ही नामान्तर है जिसे आचार्य रमानाथ झा ने 'मिथिला मिहिर'- विद्यापति स्मृति अंक 1971 में स्पष्ट किया था। अर्जुन राए की सभा में एक सिद्ध पुरुष आता है और शृंगार रस के वर्णन का प्रस्ताव देता है तथा गोपियों के साथ कृष्ण के विलास का वर्णन करता है।

3. **कीर्तिपताका**- इसमें बंगाल के किसी सुलतान के साथ शिवसिंह का घनघोर युद्ध चलता है। तुर्क सेना हार कर सुलतान के पास जाती है। कुपित सुलतान बड़ी सेना सहित आक्रमण करता है। भयंकर लड़ाई में शिवसिंह के सिर पर एक बाण लगता है। किन्तु वे पीछे नहीं हटे, बल्कि डटे रहे। सुलतान घायल हो पीठ दिखाता है। उसकी सेना धन सम्पत्ति, अस्त्र-शस्त्र छोड़ कर भागती है। इस तरह शिवसिंह अपने पिता के वैरी को हरा कर वापस आते हैं। उनपर फूल की वर्षा होती है। वे वीरों को सम्मानित करते हैं और धन-रत्न

आदि का प्रचुर दान कर विजेता के रूप में यशस्वी होते हैं।

कीर्तिगाथा और कीर्तिपताका की भाषा

इन ग्रन्थों की भाषा मुख्य रूप से अवहट्ठ (मिथिला का अपभ्रंस) है, किन्तु संस्कृत, प्राकृत एवं मैथिली भाषा का भी प्रयोग हुआ है। कीर्तिपताका एवं कीर्तिलता में अवहट्ठ के बीच कुछ फारसी शब्दों का प्रयोग हुआ है जहाँ यवनों का वर्णन आया है। कीर्तिपताका के बीच में अनुच्छेद सं० 13 से 16 एवं 30-31 संस्कृत में है, उसमें भी अनुच्छेद 15 एवं 31 सुललित प्रवाहमय लच्छादार गद्य है। कीर्तिपताका में केवल अन्तिम पद्य संस्कृत में है।

कीर्तिगाथा के अनुच्छेद सं०- 2, 17 और 18 तथा कीर्तिपताका का 53 से 57 अनुच्छेद प्राकृत में है।

कीर्तिगाथा के अनुच्छेद सं०-7, 27 और 28 तथा कीर्तिपताका के 20, 22 से 24, 50, 52, 57 और 58 से 66 तक मैथिली में हैं। जिनमें 20, 50, 52 एवं 57 लच्छादार गद्य में है।

शेष अंश अवहट्ठ में है। ज्ञातव्य है कि पश्चिम भारत में जब प्राकृत के बाद अपभ्रंस का प्रचलन हुआ उसी समय मिथिला में प्राकृत के बाद सीधे अवहट्ठ का युग हुआ। अर्थात् अवहट्ठ मिथिला के अपभ्रंस का ही नाम है। इसका प्रयोग 'डाक' के (8वीं शती) प्राचीनस्रोत से प्राप्त वचनों में हुआ है जब कि अवहट्ठ नाम का प्रथम उल्लेख दसवीं शताब्दी के मैथिल विद्वान पहराज ने 'पाउअकोस' में किया है और चौदहवीं शताब्दी के आरम्भ में कविशेखर ज्योतिरीश्वर ने वर्णरत्नाकर में संस्कृत प्राकृत के बाद अवहट्ठ का ही उल्लेख किया है। इस भाषा का कुछ झलक वर्णरत्नाकर में देखा जाता है जबकि इसका मानक प्रयोग विद्यापतिकृत कीर्तिगाथा, कीर्तिलता और कीर्तिपताका में देखा जाता है। बाद में उमापति के पारिजातहरण (1625 ई.), रामदास झाकृत आनन्दविजय (1640 ई.), देवानन्दकृत उषाहरण (1640 ई.), रमापतिकृत रुक्मिणीपरिणय (1750 ई) इत्यादि ग्रन्थों में एक-दो गीत अवहट्ठ भाषा के प्राप्त होते हैं।

कीर्तिपताका में वर्णरत्नाकर के अनेक शब्द उसी सन्दर्भ में प्रयुक्त हुए हैं– अओकी, अक्खउरि, अगहरिया, अत्थान, कुमर, खाति, चउदन्त, चन्देल, चाहुआन, चोरगाह, नगाढ़ि (नगारि), पसाहि, पाइक, पाखर, बउराअ (बउरिआ), विबन्ध, भण्डारि, मल्ल, महथ, मान, मुदहथ, रट्ठउर, राउत्त, राउतपति, राजवल्लभ, साचार, सुरबए, सुरुकि, सव्वा– अओसर (सर्वावसर) इत्यादि।

इसी तरह कीर्तिपताका में वर्णरत्नाकर एवं कीर्तिलता की कुछ पंक्तियाँ बहुत अंश में समान प्रतीत होती हैं।

कीर्तिपताका में समकालिक अस्सी से अधिक वीरों एवं विद्वानों के नामों का उल्लेख हुआ है जिससे इस काव्य की ऐतिहासिकता भी स्पष्ट ही है।

ऐतिहासिक विवरण

ओइनवार वंश के ब्राह्मण राजपण्डित कामेश्वर ठाकुर 1340 ई.में मिथिला के शासक नियुक्त किये गये। उनके निधन के बाद उनके पुत्रों में राज्याधिकार के लिए विवाद हो गया और राज्य दो भागों में विभक्त हो गया– (1) दक्षिणी मिथिला के राजा भोगीश्वर राए हुए जिनके पुत्र राए गणेश्वर एवं पौत्र राजा कीर्तिसिंह हुए। इन्हीं के विजय का वर्णन विद्यापति ने कीर्तिलता में किया। (2) उत्तरी मिथिला के राजा भवेश्वर सिंह हुए जिनके पुत्र देव सिंह और पौत्र शिवसिंह हुए। इन्हीं शिवसिंह का विजय विद्यापतिकृत कीर्तिपताका में वर्णित है।

भवेश्वर सिंह के अन्य पुत्रों में त्रिपुर सिंह हुए जिनके पुत्र अर्जुन राए ने देवसिंह से राज्य बाँट कर महान् सामन्त बन बैठे। इन्हीं अर्जुन राए की यशोगाथा विद्यापतिकृत कीर्तिगाथा में वर्णित है। इस प्रकार ओइनवार वंश की तीन शाखाओं का राज्य 1342 से 1400 ई. तक समानान्तर रूप से चलता रहा। इनमें परस्पर घोर विरोध था। एक राजा के दरबार में प्रवेश करने वाले दूसरे दरबार नहीं जा सकते थे जिसके प्रमाण के रूप में उपर्युक्त तीनों में चर्चित व्यक्ति सर्वथा भिन्न हैं। इसके अपवाद कविवर

विद्यापति थे। वे अपने उदात्त व्यक्तित्व के कारण सभी दरबार में सम्मानित थे। इनकी तीनों अवहट्ठ कृतियों का काल 1396 से 1402 ई. के बीच रखा जा सकता है।

कीर्तिपताका के नायक शिवसिंह महान् वीर थे। इनके पिता के समय से ही मिथिला पर यवनों का आक्रमण होता रहा। गौडदेश (बंगाल) का शासक शम्शुद्दीन इलियास (1353-59) मिथिला को रौंदते हुए नेपाल तक गया। 1956 ई. में उसने देवसिंह के पिता भवसिंह के ऊपर आक्रमण किया था और अपने नाम पर एक नगरक बसया-शम्शुद्दीनपुर जो आज समस्तीपुर नाम से जाना जाता है। उसके पुत्र सिकन्दर खाँ से भी देवसिंह की शत्रुता बनी रही और उसके पुत्र ग्यासुद्दीन आजम शाह (1396 से 98) के द्वारा भी उनपर आक्रमण होता रहा। इस प्रकार गौडेश इल्यासवंश तो स्पष्ट ही शिव सिंह के पिता एवं पितामह का शत्रु होने से पितृकुलवैरी हुआ। यद्यपि शिवसिंह का युद्ध गौडेश सुलतान से हुआ था एवं वह इनके पिता का वैरी था इसका उल्लेख है, पर सुलतान के नाम का उल्लेख नहीं है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि वह गौडेश आजमशाह था, जिसे हराकर शिवसिंह ने वप्पावैर चुकाया था। कीर्तिपताका में निसिपा खाँ के रण से भागने का वर्णन है। वह दिल्ली में फीरोज तुगलक शाह का पुत्र नासिरुद्दीन नसरत शाह (1388-1405) था। फीरोज शाह तुगलक ने देवसिंह को हराकर शिवसिंह को नजरबन्द कर रखा था, जिन्हें कवि विद्यापति ने अपने काव्य कौशल से छुड़ाया था । अत: निशिपा खाँ से भी इन्हें वंशगत विरोध था, जिसे हराकर वप्पावैर चुकाया गया।

ग्रन्थकार का परिचय

(1) भीषम कवि-

प्रस्तुत पुस्तक के प्रथम ग्रन्थ का नाम तो अज्ञात है किन्तु इससे स्पष्ट लिखा है कि इसके प्रवक्ता भीषम कवि हैं। ये प्राचीन मैथिली साहित्य में प्रसिद्ध कवि के रूप में जाने जाते हैं। इनके अनेक गीत प्राप्त हैं जिनसे ज्ञात होता है कि उर्वशीचरित नाटक इनका था जो उपलब्ध नहीं है। ये मोरंग (नेपाल) के राजा नरनारायण के आश्रित थे। तदनुसार इनका समय 1550-1625 ई. सिद्ध होता है। प्रस्तुत ग्रन्थ में 'भीषम कीर मुहेन'

का अर्थ 'बड़े सूगे के मुख से' ऐसा करना उचित नहीं है क्योंकि भीषम शब्द का 'बड़ा' अर्थ नहीं होता है। फिर 'भीष्मसदृश' अर्थ करना भी उचित नहीं है क्योंकि यहाँ सदृशवाचक शब्द ही नहीं है। समास से 'भीषमरूपी कीर' ऐसा ही अर्थ होता है।

यह ग्रन्थ तालपत्र पर एक पत्र मात्र है जिसका दूसरे पत्र से सम्बन्ध ही नहीं है। अतः आगे नवजयदेव का नाम रहने पर भी इसके लेखक के रूप में उन्हें लिया नहीं जा सकता है। डॉ० शैलेन्द्र मोहन झा ने पहले पत्र के अंश को दूसरे पत्र के अंश के बीच में डालकर भ्रम उत्पन्न कर दिया है, अतः वह प्रमाण नहीं है।

कीर्तिपताका के अन्तिम पत्र पर जो समय का उल्लेख है उसका प्रभाव इस प्रथम पत्र पर नहीं पड़ सकता है क्योंकि इस पत्र का सम्बन्ध अन्तिम पत्र से है ही नहीं, यह तो दूसरे ग्रन्थ का है, लिपि भी भिन्न है।

(2) विद्यापति कवि–

दूसरा ग्रन्थ कीर्तिगाथा है जिसमें ग्रन्थकार का नाम नवजयदेव कवि लिखा हुआ है जो विद्यापति का ही नाम है। तीसरा ग्रन्थ कीर्तिपताका के अन्त में विद्यापति का नाम है जो कीर्तिलता एवं मैथिली गीतों के प्रख्यात रचयिता कवि थे। ये विसैवार विसपी मूलग्राम के विस्फी ग्राम निवासी थे जो गाँव विहार राज्य के मधुबनी जिले में पड़ता है। इनके पिता महामहोपाध्याय गणपति ठाकुर राजपण्डित थे। इनका समय 1350 ई. से 1440 ई. के मध्य पड़ता है। ये बचपन से ही पिता के साथ राजदरबार जाते थे। ये व्याकरण, साहित्य, धर्मशास्त्र, पुराण, ज्योतिष, तन्त्र, कर्मकाण्ड, नीतिशास्त्र एवं राजनीति के मर्मज्ञ विद्वान थे और फारसी भाषा की भी जानकारी रखते थे। गद्य-पद्य रचना-चातुरी के कारण ये जनजन में प्रसिद्ध थे। इन्होंने नैमिषारण्य (उ.प्र.) एवं दिल्ली की यात्रा कर अपने कवित्व के द्वारा शाहीकारागार से राजा शिवसिंह को मुक्त कराया था और अपने मधुरगीतों के द्वारा अनेक राजाओं के नाम को अमर बना दिया। इनके धर्मशास्त्रीय निर्णय को मान्य आचार्यों ने अपने ग्रन्थ में उद्धृत किया है–

(1) म०म० केशव मिश्र ने (1500 ई.) द्वैतपरिशिष्ट में, (2) म०म० गणपति (1500 ई.) ने गंगाभक्तितरंगिणी में, (3) म०म० कमलाकर भट्ट ने निर्णयसिन्धु में। इनके मैथिली गीतों का अनुसरण गोविन्द कवि, विष्णुपुरी, भीषम, गेविन्ददास झा, उमापति आदि के क्रम से बीसवीं शतीके मध्य भाग तक होता रहा। ये राजकवि से लेकर जन-जन के कवि हो गये और आज उनकी प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गयी है। इनकी जीवनी 'साहित्य अकादेमी', नई दिल्ली से अंग्रेजी, हिन्दी और मैथिली में प्रकाशित है जिसके मूल लेखक प्रो० रमानाथ झा थे। इनकी कृतियाँ निम्नांकित हैं–

(क) **मैथिली**- विद्यापति गीतावली, गोरक्षविजयनाटक (संस्कृत, प्राकृत के साथ मैथिली गीत की प्रधानता)।

(ख) **अवहट्‌ठ**- कीर्तिलता, कीर्तिगाथा, कीर्तिपताका।

(ग) **संस्कृत**- भूपरिक्रमण (यात्रावृत्तान्त), पुरुषपरीक्षा (गद्य-पद्यात्मक नीति-दण्डनीति से मण्डित रोचक कथाएँ), मणिमञ्जरी नाटिका, लिखनावली (राजकीय पत्र लेखन सम्बन्धी गद्यात्मक), विभागसार (धन बँटवारा सम्बन्धी), शैवसर्वस्वसार, शैवसर्वस्वसारप्रमाणभूत प्रमाणवचन संग्रह (शैवसर्वस्वसार का पूरक), दानवाक्यावली (दानके संकल्प-वाक्य), गंगावाक्यावली (गंगा की आराधना से सम्बद्ध), दुर्गाभक्तितरंगिणी (प्रमाण सहित दुर्गापूजन), व्याड़ीभक्ति-तरंगिणी (सर्पपूजन), गयापत्तलक (संक्षिप्त गयाकृत्य), वर्षकृत्य, प्रश्नोत्तरमालिका (पद्यात्मक उपदेशप्रद प्रश्न एवं उत्तर) एवं ज्योतिषसारसमुच्चय (ज्योतिषग्रन्थ, इसका हस्तलेख खण्डित मिथिलाक्षर में दरभंगा के मिथिला संस्कृत शोध संस्थान में है।))।

संकेत- 'ए ऐ' ओ औ' इन वर्णों का जहाँ ह्रस्व उच्चारण होता है वहाँ मूलग्रन्थ में इन वर्णों के नीचे रेखा दे दी गयी है। की.गा. = कीर्तिगाथा। की.प. = कीर्तिपताका।

कृतज्ञता ज्ञापन

इस पुस्तक के सम्पादन एवं व्याख्या करने में जिन विद्वानों से साक्षात् या उनके ग्रन्थ द्वारा सहायता प्राप्त हुई हैं उन सबों के प्रति हम कृतज्ञ रहेंगे। पूज्य गुरुवर पं० गोविन्द झा से अनेक परामर्श होता रहा है और उनके सम्पादित 1992 में प्रकाशित कीर्तिपताका इस संस्करण का मूल आधार बना। सम्मान्य डॉ० रामदेव झा ने मेरे कीर्तिपताका के मेरे एवं पं० गोविन्द झा द्वारा किये पाठोद्धार की समीक्षा के साथ कुछ संशोधन का परामर्श देते हुए एक निबन्ध प्रकाशित किया था जो मेरे इस प्रस्तुत कार्य का प्रेरणास्रोत बना। आदरणीय प्रो० शैलेन्द्र मोहन झा द्वारा सम्पादित कीर्तिपताका से कुछ महत्त्वपूर्ण पाठ संशोधन का आधार प्राप्त हुआ। डॉ० रामभरोस कापड़ि 'भ्रमर' एवं श्री चन्द्रेश इसके मैथिली अनुवाद हेतु प्रेरित करते रहे। इन सभी विद्वानों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

अन्त में अपनी त्रुटि के लिए क्षमाप्रार्थी होते हुए विद्वज्जनों से निवेदित करता हूँ कि इसका अध्ययन-मनन कर अपना सुझाव / मन्तव्य प्रेषित करने की कृपा करेंगे।

निवेदक

दीप गाम
गुरुपूर्णिमा शाके 1941
16.7.2019

पं० शशिनाथ झा
पूर्व प्राचार्य
व्याकरण विभाग
का०सिं०द० संस्कृत विश्वविद्यालय,
दरभंगा

(1)

भीषमकवि-कृत काव्य का आदि अंश

श्रीमहागणेशाय नमः॥

(वसन्ततिलकाछन्दः)

नित्यो विभुः पदविलम्बि-जटान्तरस्थो
देहार्धबद्ध-रमणी-रमणीयमूर्त्तिः।
कौतूहलादिव निकुञ्जगृहं निविष्टः
शृङ्गारवानवतु वो नवचन्द्रचूड़ः॥1॥

(अनुष्टुप् छन्दः)

अटन्ती कण्ठसंसक्ता रसशीकरवर्षिणी।
भारतीय मालती-मालोपमयं मे विराजताम्॥2॥

(आर्या)

निघ्नन्तं विघ्नानिह मधुलिह इव तारकर्ण-तालेन।
लम्बोदरमवलम्बे, स्तम्बेरम-वदनमेकरदम्॥3॥

दोहा (द्विपदम्)

पण्डिअ-मण्डलि बद्ध गुणे, भीषम-कीर मुहेन।
वाणी महुर महग्ध रस, पिअउ सुअन सवणेन॥4॥
दुज्जन पअ पणमिअइ जइ, तउ परगुन दुस्सन्त।
जइ जोका सिर सन्नविअ, तउ सोनिअ सोसन्त॥5॥

(चौपाई)

दुज्जन परगुन दूसन अप्पइ।
सज्जन दूसन भूसन थप्पइ॥6॥
तद्द........................

(अपूर्ण)

संस्कृतच्छायाः-

पण्डितमण्डली-बद्धगुणेन भीष्म-कीरमुखेन।
वाणी-मधुरमहार्घरसं, पिबतु सुजनः श्रवणेन।। 4।।
दुर्जनः पदे प्रणम्यते यदि, तदपि परगुणं दूषयति।
यदि जलौकाः शिरसा सन्नमति, तदपि शोणितं शोषयति।। 5।।
दुर्जनः परगुणे दूषणमपर्ययति।
सज्जनो दूषणे भूषणं स्थापयति।। 6।।

श्री महागणेश को नमस्कार है।।

नित्य (सदा एक समान रहने वाले) व्यापक शिवजी, जो पैर तक लटकते हुए जटाओं के भीतर स्थित अपने देह के आधे भाग में सुन्दरी पावर्ती को रख लेने से सौन्दर्यमूर्त्ति हो गये हैं, लगता है कि उत्सुकतावश निकुञ्ज-भवन (लतागृह) में प्रवेशकरश्रृंगार चेष्टा वाले हो गये हैं, वे चन्द्रमा को शिर का भूषण बनाने वाले (शिव) आप-लोगों की रक्षा करें।

यहाँ पैर तक लटकते सघन विशाल जटा के बीच अर्धांगिनी वाले शिव में निकुञ्जस्थित नायिका को आलिङ्गित करने वाले नायक की सम्भावना करने से उत्प्रेक्षा अलंकार है। यहाँ मुख्य लक्ष्य शिवस्तुति रहने के कारणश्रृंगार गौण है, भक्ति रस ही प्रधान है।। 1।।

यह मेरी वाणी (रचना) मालती फूलों की माला के समान (सज्जनों के गले में) विराजित हो, जो कण्ठ में लगे रहने पर भी चलती हुई रस के फुहारों की वर्षा करती है।

जैसे मालती माला गले में लगी हुई इधर उधर हिलकर परागों की वर्षा करती है, वैसे ही यह काव्यकृति सहृदयों के कण्ठ में बास करश्रृङ्गारादि रसकणों की वृष्टि करेगी- यह आशय है। यहाँ पूर्वार्द्ध में श्लेष एवं उत्तरार्द्ध में उपमा अलंकार है।। 2।।

अपने कानों की तेज झटके से भौंरो को मारने के समान इस संसार में विघ्नों का नाश करते हुए लम्बा उदर (पेट) वाले, हाथी के समान मुखवाले एतदन्त गणेश के शरण का अवलम्बन करता हूँ। हाथी के गण्डस्थल पर मदजल जब चलने लगते हैं तो उसकी सुगन्धि से भौरे दौड़ते हैं, जिन्हें वे अपने कानों के झटके से हटाते हैं। यहाँ गणेशजी काले काले विघ्नों को भगाते हैं जो लगता है कि भौंरे को ही मार रहे हों। यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार है।। 3।।

पण्डितों के द्वारा गुणों (उदारता आदि या डोरी) से बन्धे हुए भीषम कवि रूपी शुक (तोता) के मुख के मधुर एवं बहुमूल्य रस को सहृदय लोग अपने कानों से पी जाएँ।

भीषम कवि पण्डितों के उदारता आदि गुणों से बंधे हैं और तोते को गुण (रस्सी) से बांधा जाता है। अथवा मुख ही गुणों से बद्ध है। पण्डित-मण्डली के द्वारा बद्ध हैं गुण जिसमें ऐसा भीषम-कीर का मुख-ऐसी व्युत्पत्ति की जा सकती है। यहाँ गुण शब्द में श्लेष तथा भीषम-कीर में रूपक अलंकार है।। 4।।

यदि दुर्जन पैर पर भी गिर जाय तो भी वह दूसरे के गुण को दूषित ही करता है। यदि जोंका सिर झुकाता भी है तो वह शोणित ही चूसता है। यहाँ दृष्टान्त अलंकार है।। 5।।

दुर्जन दूसरे के गुणों में भी दोष ही देता है, जबकि सज्जन दोषों में भी गुण ही का आरोप करता है।। 6।।

(इसके आगे ग्रन्थ अनुपलब्ध है। मूल पोथी (हस्तलेख) में इस प्रथम पत्र को अगले पत्रों से कोई सम्बन्ध नहीं बैठता है। अतः आगे के पत्र दूसरे ग्रन्थ के हैं।)

मैथिली व्याख्या-

कैलासाचल धवल निवास।
अर्धांगीकृत गिरिजा पास।।
शिव छथि ईश्वर जगन्निवास।
तनिक नमन कए करी प्रकाश ।।

नित्य (सदा एक समान रहएवाला) सर्वव्यापक शिव अपन पएर तक लटकैत जटाक बीच मे अपन आधा देह मे रमणी पार्वती कें रखने रमणीयमूर्ति भए गेल छथि। से लगैत छथि जे उत्सुकतावश निकुञ्ज गृह (लतामंडप) मे प्रवेश कए शृंगार चेष्टा कए रहल होथि। एहन नवचन्द्रचूड़ (नवीन चन्द्रमाकें माँथ पर रखनिहार) शिव अहाँ लोकनिक रक्षा करथु।

विमर्श– एहि पद्यमे पएर तक लटकैत सघन विशाल जटाक बीच अर्धांगिनी सहित शिव मे निकुञ्जस्थित नायिकाक अलिंगन कएनिहार कोनो नायकक सम्भावना कएल गेल अछि जे उत्प्रेक्षा अलंकार थिक। 'रमणी-रमणीय' एवं 'नवतुवो नव' मे यमक अलंकार तथा 'निकुंजगृहं निविष्टः' इत्यादिमे अनुप्रास अलंकार अछि। मुख्य उद्देश्य शिवस्तुति रहबाक कारण भक्तिरस मुख्य एवं शृंगार गौण अछि।।1।।

ई हमर वाणी (रचना) मालतीफूलक माला जकाँ सज्जन गरामे विराजित हो जे कण्ठमे सटल रसक फूही बरसबैत अछि।

विमर्श– जेना गरामे पहिरल मालतीमाला हिलि कए परागक वर्षा करैछ तहिना ई कृति सहृदयक कण्ठमे बसि श्रृंगार आदि रसक वर्षा करत- ई तात्पर्य अछि। एतए मालापक्षमे कण्ठक अर्थ गरा (गर्दनि) आ रसक अर्थ पराग थिक, किन्तु ग्रन्थपक्षमे कण्ठक अर्थ कण्ठस्थ वाग्यन्त्र ओ रसक श्रृंगारादि होइछ, तेँ कण्ठ ओ रस पद मे श्लेष अलंकार आ माला तथा कविवाणी मे समानताक कारण उपमा अलंकार अछि।। 2 ।।

कानक तेज झाँट सँ भौंरासब केँ मारैत गणेशजी लगैत छथि जेना विघ्न सबकेँ मारैत होथि, एहन पैघ पेटवाला, हाथीक समान मुखवाला एकदन्त गणेशक शरणक अवलम्बन करैत छी।

विमर्श– मत्ता हाथीक कनपट्टी सँ मदजल चुबैत सुगन्ध करैत छैक जाहि पर भौंरा मड़राइत रहैत छैक। तकरा हाथी अपन कान डोलाए मारैत-भगबैत अछि जे लगैत अछि जेना कारी-कारी भौंरा स्वरूप विघ्न केँ मारि रहल होथि। एतए भौंरा मे विघ्नक सम्भावना उत्प्रेक्षा अलंकार थिक।। 3 ।।

कविक प्रस्तावना– पण्डित-मण्डलीक गुण (विद्वत्ता वा डोरी) सँ बान्हल भीषम कविरूपी सूगाक मुँह सँ बहुमूल्य रसमय वाणी केँ सुजन लोकनि अपन कान सँ सुनैत जाथु।

विमर्श– भीषम कवि पण्डितक उदारता आदि गुणसँ बान्हल छथि तथा सूगा डोरी (गुण) सँ बान्हल अछि। एतए गुण शब्दमे श्लेष एवं भीषम-कीर मे रूपक अलंकार अछि।। 4 ।।

दुर्जन निन्दा– यदि दुर्जनकेँ पएर पर प्रणामो कएल जाए तैयो ओ दोसराक गुणकेँ दुसबे करत। जोँक यदि माँथ झुकबितो अछि तैयो शोणित शोखिते अछि। एतए दृष्टान्त एवं स्वभावोक्ति अलंकार अछि।। 5 ।।

दुर्जन आनक गुणहुँ मे दोषे देखैत अछि आ सज्जन दोषहु मे गुणकेँ स्थापित करैत छथि।। 6 ।।

विमर्श– एहि सँ आगूक ग्रन्थ अनुपलब्ध अछि। मूल तालपत्र हस्तलेख मे एहि प्रथम पत्र केँ आगूक पत्र सँ कोनो सम्बन्ध नहि बैसैत अछि। आगाँक पत्र सब एहि सँ भिन्न ग्रन्थ थिक। तेँ आदिमे गणपति वन्दना, कविक प्रतिज्ञा आदि अछि। दुनू केँ एक ग्रन्थ मानला पर गणपति वन्दना ओ प्रतिज्ञाक पुनरुक्ति भए रहल अछि।

समाप्त

(2)

विद्यापतिकृत

कीर्तिगाथा

.....सदानन्दकन्दोऽयमिन्दुः॥1॥

(आर्या छन्द)

वन्दाइं गणबइणो, पअ-कमलं सुप्पसन्न-हिअअस्स।
विहिण-विदारण-कारण, किअ-वारण-मुह-विसाल-दन्दस्स॥ 2 ॥

चौपाई

पणवञो गणबइ गाबञो गाहा।
अञ्जुन-राअ-राअ भुअ-छाहा।
संका छाड़ि बसओं तिरहुत्ती।
दिने दिने पहुगुणे बड्ढञु कित्ती॥ 3॥

(दोहा)

कविमह नवजयदेव कवि, रस मह एहु सिङ्गार।
जगत सिंह रिपुराअ मह, तीनिञु त्रिभुवन सार॥ 4॥

(रड्डा छन्द)

राअ अञ्जुन गरुअ पहुधम्म॥
मञ्जादा वस हिअए, रस विवेक, वसु दाने मण्डिअ।
सूरत्तने जगदेव, खग्गे खण्डि परिपन्थि दण्डिअ॥
करुणा वसइ विवेक सञो, खेमा सत्तुओ सङ्ग।
धम्म सहित सिङ्गार रस, कव्वकलाबहु रङ्ग॥ 5॥

संस्कृच्छाया-

वन्दे गणपतेः पदकमलं सुप्रसन्न-हृदयस्य।
विघ्न-विदारण कारण-कृत-वारणमुखविशालदन्तस्य।। 2।।
प्रणमामि गणपतिं गायामि गाथाम्।
अर्जुनराजराजस्य भुजच्छायायाम्।।
शङ्कां छित्त्वा वसामि तीरभुक्तौ।
दिने दिने प्रभुगुणैः वर्धयामि कीर्त्तीः।। 3।।
कविमध्ये नव जयदेव कविः, रसमध्य एषशृङ्गारः।
जगत्सिंहो रिपुराजमध्ये, त्रयोऽपि त्रिभुवनस्य साराः।।
राजाऽर्जुनो गुरुः प्रभुधर्मे।।
मर्यादा वसति हृदये, रसं विवेकेन, वसु दानेन मण्डितवान्।
शूरत्वेन जगद्देवः खड्गेन खण्डयित्वा परिपन्थिनं दण्डितवान्।।
करुणा वसति विवेकेन, क्षमा शत्रुणापि सङ्गम्।
धर्मसहितःशृङ्गारो रसः काव्यकलापेनापि रङ्गम्।। 5।।

हिन्दी- सदा आनन्द का मूल यह चन्द्रमा है।। 1।।

(यह पंक्ति मन्दाक्रान्ता छन्द का अन्तिम अंश है। यह अंश पूर्व पत्र से असम्बद्ध है। अतः इस ग्रन्थ के प्रथम पत्र अनुपलब्ध होने के कारण आदि भाग खण्डित है।)

अतिशय प्रसन्न हृदय वाले गणेश जी के चरण कमल की वन्दना करता हूँ, जिन्होंने विघ्न के विदारण के लिए ही शायद अपने गजमुख में विशाल दाँतों को धारण किया है। उत्प्रेक्षा अलंकार।। 2।।

मैं गणेश को प्रणाम करता हूँ और अर्जुन राए राजा की भुजाओं की छाया में गाथा (उनका यशोगान) गाता हूँ। निःशंक होकर तिरहुत राज्य में हम वास करें और प्रतिदिन प्रभु के गुणों से उनके यश को बढ़ावें।। 3।।

कवियों में नवजयदेव कवि (विद्यापति), रसों में प्रस्तुत शृंगार और शत्रुओं पर शासन करने वालों में जगत सिंह (अर्जुन राए) ये तीनों त्रिभुवन के सार (तत्त्व) हैं। यहाँ तुल्ययोगिता अलंकार है।। 4।।

राजा अर्जुन प्रभुधर्म (अधिपतियों के गुण) से गौरवशाली हैं। उनके हृदय में मर्यादा वसती है, रस (श्रृंगारिकता) विवेक से तथा धन दान से शोभित है। शूरता के द्वारा जगदेव (जगतसिंह = अर्जुन राए) खड्ग से खण्डित करके शत्रुओं को दण्डित करते हैं। विवेक के साथ करुणा (दया) भी बसती है, शत्रु के साथ भी क्षमा करते हैं, धर्म के साथश्रृंगार रस है और काव्य कलापों (समूहों) के साथ रङ्ग (खेल, विलास) भी करते हैं।। 5।।

मैथिली- ई चन्द्रमा सदा आनन्दक मूल थिकाह।। 1 ।।

सुप्रसन्न हृदयवाला गणपतिक चरणकमलक वन्दना करैत छी जे विघ्न केँ फाड़बाक लेल अपन गजमुख मे विशाल दाँतक धारण कएने छथि। उत्प्रेक्षा अलंकार।। 2 ।।

गणेशकेँ प्रणाम करैत छी आ अर्जुनराजराजक भुजाक छायामे हुनक गाथाक (यश वर्णनक) गान करैत छी। नि:शंक (निर्भय) भए तिरहुत (मिथिला) देशमे बसि रहल छी। प्रतिदिन प्रभुक (ओहि राजाक) गुणसँ हुनक कीर्तिकें बढ़ाए रहल छी।। 3 ।।

कवि सब मे नवजयदेव कवि विद्यापति, रसमे ई श्रृंगार रस आ शत्रु पर शासन कएनिहार राजा सभ मे जगत् सिंह (अर्जुन राए) ई तीनू त्रिभुवनक सबसँ उत्तम थिकाह। तुल्ययोगिता अलंकार।। 4 ।।

राजा अर्जुन प्रभुधर्म (अधिपतिक गुण) सँ युक्त रहबाक कारण गौरवशाली छथि। हुनक हृदयमे मर्यादा (न्यायोचित स्थिति) बसैत छनि। रस (श्रृंगारिकता) विवेक सँ तथा धन दानसँ शोभित छनि। ई शूरतामे जगदेव =जगत्सिंह देव तरुआरि सँ काटि शत्रुकेँ दण्डित करैत छथि। हिनकामे करुणा (दया) विवेकक संग ओ क्षमा शत्रुओक संग छनि। हिनका धर्मक संग श्रृंगार रस ओ काव्य सबहुक संग अनुराग (प्रेम) छनि।। 5 ।।

छन्दः (चौपाई)

राअधम्म जसु मानस जग्गइ।
पठम पहर देवच्चन लग्गइ।।
नित्त सराध बाध नहि कबहुँ।

बम्भण तुट्ठ करिअ जन सबहुँ।। 6।।

राउत पाइक सेवाँ आबथि।

आसन पान तुरङ्गम पाबथि।।

जोग अजोग दानखने जानिअ।

हाथि पसाहि तुरङ्ग पलानिअ।। 7।।

वैरि विमद्दिअ, विपअ विचारी।

सेना सज्जिअ, परबल मारी।।

भक्ख भोज सेवक नहि वञ्चिअ।

भोगदव्व भण्डार न सञ्चिअ।। 8।।

सुरतरु वञ्चिअ दानक दापे।

पास न परसए पाइअ पापे।।

सोकेँ विहन्न लोक आनन्दिअ।

सुनि वेवहार सुबुद्धिहिं पण्डिअ।। 9।।

छाया :-

राजधर्मो यस्य मनसि जागर्त्ति।

प्रथम पहरे देवार्चने लगति।

नित्यश्राद्धे बाधः न कदापि।

ब्रह्मणं तुष्टं करोति सर्वो जनः।। 6।।

राजपुत्राः पदिकाः सेवायाम् आयान्ति।

आसनं ताम्बूलं तुरङ्गमं प्राप्नुवन्ति।।

योग्या अयोग्या वा दानक्षणे ज्ञायन्ते।

हस्तिनः प्रसाध्य तुरङ्गाः परानम्यन्ते।। 7।।

वैरिणं विमर्द्य विपद् विचारयति।

सेनां सुसज्ज्य परबलं मारयति।।

भक्ष्य-भोज्ये सेवकं न वञ्चयति।

भोगद्रव्यं भाण्डागारे न सञ्चयति।। 8।।

सुरतरुं वञ्चयति दानस्य दर्पेण।

पार्श्वं न स्प्रष्टुं प्राप्यते पापेन।।

शोकेन विषण्णं लोकम् आनन्दयति।

श्रुत्वा व्यवहारं करोति सुबुद्ध्या पण्डितेभ्य:।। 9।।

हिन्दी- उनके मन में राजधर्म जागृत है। प्रथम पहर को वे देवार्चन (पूजा) में लगते हैं। नित्य श्राद्ध में किसी को कभी बाधा नहीं पहुँचती है और ब्राह्मणों को सभी लोग सन्तुष्ट करते हैं।। 6।।

वहाँ राजपुत्र एवं व्यापारी (पाइक) उनकी सेवा में आते हैं और वहाँ आसन, पान (तम्बूल) एवं घोड़ा प्राप्त करते हैं। योग्य और अयोग्य दान के समय जाने जाते हैं, अर्थात् कम या अधिक दान के आधार पर ही कोई योग्य या अयोग्य जाना जाता है। हाथी को सजाकर घोड़ा पर जीन कसा जाता है।। 7 ।।

शत्रु को मर्दित कर विपत्ति पर विचार करते हें, सेना को सज्जित कर शत्रुसैन्य को मारते हैं, खाने पीने के अवसर पर (भोज में) सेवकों को नहीं छोड़ते हैं, भोग्य द्रव्य को भण्डार में ही नहीं रखते हैं, अपितु उपभोग एवं दान करते हैं।। 8।।

दान के दर्प से कल्पवृक्ष को भी वञ्चित करते हैं, अर्थात् सर्वाधिक दाता के पद से हटाते हैं। पाप उनके पास स्पर्श नहीं करता है। पण्डितों से व्यवहार की शिक्षा सुनकर अपने सुबुद्धि से शोक विह्वल लोगों को आनन्दित करते हैं।। 9।।

मैथिली- जनिक मनमे राजधर्म (राजाक कर्तव्यक प्रति जागरूकता) जागि रहल छनि। ओ दिनक पहिल पहर (नओ बजेक भीतर)मे देवपूजा मे लागि जाइत छथि। जनिक राज्यमे नित्यश्राद्ध (दैनिक पितृपूजन) मे कहियो बाधा नहि छनि आ ब्राह्मणकें सब लोक सन्तुष्ट करैत छनि।। 6 ।।

राजपूत ओ पदिक=व्यापारी पैकार हुनक सेबामे अबैत छथि जे हिनका सँ आसन, पान ओ घोड़ा प्राप्त करैत छथि। के योग्य आ के आयोग्य से हुनक दानक कालमे जानल जाइत छथि। ओतए हाथीकेँ पसाहिन (सुसज्जित) कए घोड़ा पर जीन कसल जाइत अछि।। 7 ।।

ओ वैरीकें मर्दित करैत छथि आ आगाँक विपत्ति (आबए वाला संकट वा आक्रमण) पर विचार करैत छथि। सेनाकेँ सुसज्जित कए शत्रुक बल=सेना केँ मारैत छथि। सामान्य भोजन सामग्री (भक्ष्य) आ भोज सँ सेवककें वञ्चित नहि रखैत छथि (हुनका सबकें नहि छोड़ैत छथि)। भोगक द्रव्य (वस्तु) कें विनु विलहनहिं भड़ार मे नहि संचित करैत छथि।। 8 ।।

कल्पवृक्ष केँ दानक दाप=दर्प= अहंकार सँ वञ्चित कए दैत छथि अर्थात् सबसँ पैघ दाता नहि रहए दैत छथि। पाप हुनक लग स्पर्शो नहि कए सकैछ। शोकसँ सीदित लोककें आनन्दित करैत छथि आ सुबुद्धि पण्डित सँ नीति सुनि सद्बुद्धिसँ व्यवहार चलबैत छथि।

भक्ष्य= खएबाक वस्तु मे अर्थात् सामान्य भोजन मे। भोज= सामूहिक भोजनमे। वंचित= दूर करब, परे राखब। विहन्न=विषण्ण= विह्वल=विकल । कल्पवृक्षहु सँ दान करबा मे बढ़ि गेल छथि, ई तात्पर्य।। 9 ।।

(षट्पद छन्द)

धम्म देखि वेवहार लोक नहि लहइ पराहव।
सब काँ घर उच्छाह पलटि जनि जम्मिअ राहव।।
दा<u>ने</u> दलिअ दारिद्द, खग्<u>गे</u> परिपन्थी खण्डिअ।
जस पउरुस पत्ताप,सअल महिमण्डल मण्डिअ।।
वीरज्जुन-राज विराज भउ, तिरहुति मज्जादा बहि रहिअ।
करि तुरअ पत्ति पअभार भरे, कुरुम कोर कसमसि सहिअ ।। 10 ।।

(रड्डा छन्द)

राअ बइठउ जख<u>ने</u> अत्थान।।
सव्ववा अ<u>ओ</u>सर हुअउ, राअसाल राउ<u>त्ते</u> पूरिअ।
जाताआत दुआर, पाअ-भरहिं पासान चूरिअ।।
सिद्ध पुरुस एक आइअउ, नरबइ पुच्छिअ ताम।
सो पत्थाव सिङ्गार रस, अहह ! कुतूहल ठाम।। 11।।

(रड्डा)

तेन्ने आक्खिअ पुव्व वित्तन्त॥

बहुल राअ मो दिट्ठ, हरिच्चन्द नल राम राहव।

तुअ चरित्त देखन्त तन्हिहु केर आकलञो आहव॥

मथुरा पुरि हञु देक्खिहञु, हरि गोपिन्हि केरि मेलि।

मगन गाइ सिङ्गार रस, ते अक्खञो हरिकेलि॥ 12।

(संस्कृतम्, स्रग्धरा छन्दः)

सीता-विश्लेषदुःखादिव रघुतनयो लब्धकृष्णावतारः

पूर्वं कृष्णो यथाभूदरिकुलदमनः साम्प्रतं तादृशस्त्वम्।

तस्माद् भूपालमौले ! सुखमपि सुरतादेव देवानुभूयाः

संसारे भोगसारे स्फुटमवनिभुजां श्रीफलं वा किमन्यत्॥ 13 ॥

छाया-

धर्मं दृष्ट्वा व्यवहरति, लोको न लभते पराभवम्।

सर्वेषां गृहे उत्साहः, परावृत्य किमु जातो राघवः॥

दानेन दलति दारिद्र्यं खड्गेन परिपन्थिनः खण्डयति।

यशः-पौरुष-प्रतापैः, सकल-महिमण्डलं मण्डयति॥

वीरोऽर्जुनराजो विराजितोऽभूत्, तीरभुक्तिमर्यादा वर्धतेतराम्।

करि-तुरग-पदाति-पदभारभरेण, कूर्मः कोलः विकलं सहते॥ 10 ॥

राजा उपविष्टो यत्क्षणे आस्थाने॥

सव्वर्वावसरोऽभूत्, राजशाला राजपुत्रैः पूरिता।

यातायातद्वारे, पादभरैः पाषाणः चूर्णितः॥

सिद्धपुरुष एक आगतः, नरपतिः अपृच्छत् तावत्।

स प्रस्तौतिशृङ्गाररसम्, अहह ! कुतूहल-स्थानम्॥ 11॥

तेन आख्यातः पूर्ववृत्तान्तः।

बहुला राजानः मया दृष्टाः हरिश्चन्द्रो, नलो, रामो राघवः।

तव चरित्रं प्रेक्षमाणः, तेषामपि आकलयामि आहवम्।।
मथुरापुरि अहं प्रेक्षितवान् हरि-गोपीनां मिलनम्।
मग्नेन प्रगायश्रृङ्गाररसं, तेन आचक्षे हरिकेलम्।। 12।।

हिन्दी- धर्म को देखकर लोग व्यवहार करते हैं, दुःख नहीं पाते हैं। सबके घर में उत्साह है, जैसे राघव राम ने लौटकर पुनः (अर्जुन राए के रूप में) जन्म ले लिया हो। वे दान करके दरिद्रता को दलित कर चुके हैं, खड्ग से शत्रु को मारते हैं, यश पौरुष और प्रताप से सकल पृथ्वी-मण्डल को शोभित कर रहे हैं। वीर अर्जुनराए विराजमान हुए और तिरहुत की मर्यादा बढ़ने लगी। उनके हाथी, घोड़े और पैदल सैनिकों के भार से कूर्म (पृथ्वी को धारण करने वाले कच्छप) और कोल (वराह) कसमसाकर सहन कर रहे हैं।। 10।।

राजा जभी सभामण्डप में बैठे कि आमदरबार (सबों से मिलने का अवसर) हुआ। राजभवन राजपूतों से भर गया।

आने जाने के द्वार का पत्थर उनके पैरों के भार से चूर्ण हो गया। तभी वहाँ एक सिद्ध पुरुष आये। राजा ने उनके आने का उद्देश्य पूछा। वे (सिद्ध) श्रृङ्गार रस का प्रस्ताव देते हैं। अहा ! यह तो बहुत आश्चर्य की बात हुई।। 11।।

उसने पूर्ववृत्तान्त (घटना) कहा कि मैंने बहुत राजाओं को देखा- हरिश्चन्द्र, नल, राघव राम आदि। आपके चरित्र को देखते हुए उनके युद्धों का मूल्यांकन करता हूँ। मथुरा पुरी में मैंने देखा कि हरि और गोपियों का सम्मेलन मग्नतापूर्वकश्रृंगार रस गाकर हो रहा था। अतः आपको यह हरिकेलि मैं सुना रहा हूँ।। 12।।

पूर्व समय में सीता के वियोग की व्यथा से ही प्रायः रामचन्द्र कृष्णावतार लेकर जैसे कृष्ण बन गये थे, उसी प्रकार अभी शत्रु को दमन करने वाले आप हैं। अतः हे राजश्रेष्ठ ! देव ! आप केलि के द्वारा ही सुख की अनुभूति करें, क्योंकि भोगमय इस संसार में राजाओं की लक्ष्मी का फल दूसरा हो ही क्या सकता है।। 13।।

मैथिली- लोक सब धर्मक अनुसार व्यवहार करैत अछि आ तेँ पराभव=दुःख नहि पबैत अछि। सभक घरमे उत्साह छैक जेना राघव राम घुरि कए (फेर सँ अवतार लए अर्जुन राएक रूपमे) जनमल होथि। ओ अर्जुन राए दान सँ दरिद्रताकेँ मारि देने छथि, तरुआरि सँ विरोधीकें काटि दैत छथि, यश, बल एवं प्रतापसँ सम्पूर्ण पृथ्वीकें शोभित कएने छथि। वीर अर्जुन राए विराजमान

भेलाह आ तिरहुतक मर्यादा बढ़ए लागल। हुनक हाथी, घोड़ा ओ सेनाक पएरक भार सँ कूर्म (काछु जे पृथ्वीकें अपन पीठ पर रखने छथि) आ वराह भगवान् (कोल=शूकर) जे अपन दाँत पर पृथ्वीकेँ उठओने छथि जे कसमसा कए ओहि भारकें सहि रहल छथि।।

परिपन्थी=शत्रु। पत्ति=पैदल सैनिक। कोर=कोल=शूकर।। 10 ।।

राजा अर्जुन जखन अपन सभामण्डप (आस्थान) मे बैसलाह तँ सभक भेंट करबाक अवसर (सर्वावसर = आमदरबार) भेल । राजभवन राजपूत सँ भरि भेल (राअसाल=राजशाला=राजाक घर)। आबाजाहीक द्वारि पर नीचाँ लागल पाथर हुनका सभैक पएरक भार सँ चूरचूर भए गेल।

ताही काल ओतए एक सिद्धपुरुष (महात्मा) अएलाह। राजा हुनका सँ अएबाक उद्देश्य पुछलथिन। ओ सिद्ध श्रृंगार रसक प्रस्ताव करए लगलाह। अहा ! ई त आश्चर्यक बात भए गेल।

ताम=तावत्, तामे अथवा तम् = हुनका। प्रस्ताव=प्रस्तुति, श्रृंगार रसक आस्वादनक परामर्श ।। 11 ।।

ओ सिद्धपुरुष पूर्वक वृत्तान्त (घटना) कहए लगलाह– हम बहुतो राजा केँ देखने छी जेना-हरिश्चन्द्र, नल ओ राघव राम। अहाँक चरित्रकें देखैत हुनकहु सभक युद्धक मूल्यांकन करैत छी। मथुरा नगरी मे हम कृष्ण ओ गोपीक मिलन देखलहुँ जे मग्न भए श्रृंगारक गान करैत छल। से हम हरिकेलि (कृष्णक विलास) कहि रहल छी।। 12 ।।

पूर्व समयमे सीता सँ वियोग होएबाक दुःखे सँ रामचन्द्र प्रायः कृष्णावतार लए कए जेना कृष्ण बनि गेल छलाह तहिना एखन शत्रुक दमन कएनिहार अपने छी। अतः राजश्रेष्ठ ! देव ! अपने केलिक द्वारा सुखक अनुभूति कएल जाए, किएक त भोगमय एहि संसारमे राजाकेँ लक्ष्मीक फल दोसर भैये की सकैत अछि।। 13 ।।

संस्कृतम् (उपजातिच्छन्दः)

संसाररत्नं मृगाशावकाक्षी रत्नं च श्रृंगाररसो रसानाम्।
तच्चानुभूयाश्चिरमर्जुनेन्द्र ! पुरानुभूतं मधुसूदनेन।। 14।।

(गद्यम्)

तद् यथा, रामेण रामजन्मनि सीताविरह-दावानल-दग्धमानसेन, तत्खेदापनोदाय धृतकृष्णावतारेण गोपकुमारेण, सानन्द-सुन्दरीवृन्द-सहस्र-साहित्य-समुपजात-कुतुकेन, कदाचिदाकुलतां, कदाचित् पटुतां, कदाचिद् दृष्टिमालक्ष्य कृतकामक्रीड़ाभिलाषाभिश्चितव्रजसुन्दरीभिः कलक्वणित-नूपुरारव-रमणीय-माधुर्यमनोहराभिः, विविधभूषणखचित-नानामणि-विसर-वैचित्र्य-मनोहारिणीभिः शरच्चन्द्रमुखीभिः, पीनपयोधराक्रान्त-गुरुनितम्बविम्ब-भारोद्वहन-परिश्रम-मन्द-मन्थरगामिनीभिः कामिनीभिः, कदाचित् स्वाधीनभर्तृकायाः, कदाचिदुत्कण्ठितायाः कदाचित् कलहान्तरितायाः, कदाचित् खण्डिताया मण्डलानि गृहीत्वा स महाभगः खेलितः प्रेरितश्च॥ 15॥

(मालिनी छन्दः)

स्मित-रुचिरमुखीनां गोपसीमन्तिनीनां
ललित-चलित-नेत्रप्रान्त-लीलाविवृत्तैः।
नवकुलयवृष्टिं सर्वतस्तर्कयामः
स्मरशरपरिलग्न-भ्रूलता-चापसृष्टाम्॥ 16॥

हिन्दी- बाल मृग के समान आँखवाली नायिका संसार का रत्न है और रसों में रत्न शृंगार है। हे अर्जुनराज ! आप इसका अनुभव लें, जिसे पूर्व युगमे कृष्ण ने अनुभूत किया था।। 14।।

वह इस प्रकार है- राम ने रामावतार के समय सीता के विरहरूपी आग से जले हृदय रहने के कारण, उस खेद को दूर करने के लिए ही कृष्ण के रूप में अवतार लेकर, गोपकुमार बनकर, प्रसन्न हजारों सुन्दरियों के मिलन से उत्पन्न उत्सुकतावश कभी विकलता, कभी निपुणता तो कभी दृष्टि को लक्षित कर, काम क्रीड़ा की अभिलाषा को पूरी करने वाली, चुनी हुई व्रज सुन्दरियाँ, जो सुन्दरी मधुर शब्द वाले नूपुर के झनकार भरे माधुर्य से मनोहर, अनेक प्रकार के भूषणों में खचित अनेक मणियों की प्रचुरता से मन को हरने वाली, शरद ऋतु के पूर्ण चन्द्र के समान मुखवाली, पुष्ट स्तनों से लदी तथा भारी नितम्ब मण्डल के भार ढोने के परिश्रम के कारण अतिमन्द रूप से चलने वाली तथा कामभरी थी, उनके

साथ, कभी पति को वश में रखने वाली के, कभी पति के आगमन की उत्सुकता वाली के, कभी कलहान्तरिता (झगड़ालू) के, कभी विप्रलब्धा (संकेतित स्थान पर नायक को न पाकर खिन्ना) के, कभी वियोगिनी के, कभी अभिसारिका (मिलन हेतु संकेतित-स्थान को जाती हुई) के, कभी वासक-सज्जा (परदेश से प्रिय के आने की प्रतीक्षा में सजधज कर बैठी हुई) के और कभी खण्डिता (जिसका पति अन्य कामिनी के पास से रात के अन्त में घर पर आता हो) के मण्डल (समूह) को लेकर अपने सुन्दर महान् भाग्य को खेलने दिया एवं प्रेरित किया। (यहाँ कलहान्तिरिता आदि नायिका के आठों भेद चर्चित हैं।)।। 15।।

मुस्कानभरे सुन्दर मुँह वाली गोपवधुओं की सुन्दर चञ्चल आखों के कोनों की विलास-चेष्टाओं से लगता है कि चारों तरफ नवीन नील कमल की वृष्टि हो रही है, जो कामदेव के बाण चढ़े हुए भौंह रूपी धनुष से निकली हुई हैं।। 16।।

मैथिली- हरिणक बच्चाक समान आँखिवाली नायिका संसारक रत्न थिक आ रस सभमे श्रृंगार रत्न थिक। हे अर्जुनराज ! अपने एकर रसानुभव लेल जाओ, जकर अनुभव पहिने श्रीकृष्ण कएने छलाह।। 14 ।।

से एना अछि– रामावतार समयमे राम सीताक विरहरूपी आगिसँ जरल हृदय रहबाक कारण, ओहि खेदकें दूर करबेक लेल कृष्णक रूपमे अवतार लए गोपकुमार बनि, प्रसन्न हजारो सुन्दरीक मिलन सँ उत्पन्न उत्सुकतावश कखनो विकलता, कखनो निपुणता त कखनो दृष्टिकें लक्षित कए, कामक्रीडाक अभिलाषाकेँ पूरा करएवाली, चुनल व्रजसुन्दरी जे मधुरशब्द सँ युक्त नूपुर (पायल) केर झंकार भरल माधुर्य सँ मनोहर, अनेक प्रकारक भूषणमे खचित अनेक मणिक प्रचुरता सँ मनकें हरण करए वाली, शरद्ऋतुक पूर्णचन्द्रक समान मुखवाली, पुष्ट स्तन सँ लदल तथा भारी नितम्बमण्डलक (पोनक) भार उघबाक परिश्रमक कारण अतिमन्द रूपें चलएवाली तथा काम सँ भरल छल। तकरा सभक संग कखनो कलहान्तरिताक (झगड़ाउक) कखनो विप्रलब्धाक (संकेतित स्थान ओ समय पर प्रियतम कें नहि पाबि खिन्नाक), कखनो विरहिणीक (वियोगिनीक), कखनो

अभिसारिकाक (मिलन हेतु गुप्तरूपें प्रेमीक संकेतित स्थान मे गोनिहारिक), कखनो वासकसज्जाक (परदेश सँ प्रेमीक आगमनक प्रतीक्षा मे सज्जिताक) तथा कखनो खण्डिताक (जकर पति आन कामिनीक संग राति बिताए भोरबा रातिमे लग अबैत छैक, तकर) समूह कें लए ओ सौभाग्यशाली नायक कृष्ण ओकरा सभक द्वारा खेलाओल गेलाह आ प्रेरित भेलाह।

एतए कलहान्तरिता आदि आठो नायिकाक भेद थिक।। 15 ।।

मुसुकान भरल सुन्द मुँहवाली गोपवधू सभक सुन्दर चञ्चल आँखिक कोनक विलासचेष्टा सँ लगैत अछि जे चारू दिस नवीन नीलकमलक वर्षा भए रहल हो जे कामदेवक बाण चढ़ल भौंहरूपी धनुष सँ छूटल अछि।। 16 ।।

छन्द (पञ्चचामर)

चलन्त गोपकामिनी, गअन्द-मन्द-गामिनी
निरत्थ-सव्व-दूसना, विलास-हास-भूसना।
सुवण्ण कण्ण कुण्डला, सोआमि अङ्क मण्डना
परक्खिपात-सङ्किनी, झणज्झणन्त-किङ्किणी।। 17।।
सुसोभ सव्व लक्खना विलासिनी विअक्खना
कला कलाप-सारिणी, पिआनुराग-पालिनी।
कडक्ख-लक्ख मोचना, सरोज पत्तलोचना
विलास-हास-मण्डिआ, मनोज-तन्त-पण्डिआ।। 18।।

(षट्पद छन्द)

दीघर केश कपाल, कुटिलकोमल घनसामर।
दप्प मत्त कन्दप्प धनू जनि बन्धिअ चामर।
निक्कलङ्क ससिविम्ब सरिस सुन्दर मुखमण्डल।
पिअ-अनुराग कहन्त सवन डोलइ बे कुण्डल।।
गुरु पीन पयोधर भार भरे, मत्त-मतङ्गज-मन्द-गति।

संसार सार सिङ्गार रस, कमनक चित्त न हर जुवति॥ 19॥

छाया:-

चलन्ती गोपकामिनी, गजेन्द्र-मन्द-गामिनी।

निरस्त-सर्वदूषणा, विलासहास-भूषणा।

सुवर्णकर्णकुण्डला, स्वामिनोऽङ्कमण्डना

पराक्षिपात-शङ्किनी, झणज्झणत्किऽङ्किणी।। 17।।

सुशोभते सर्वलक्षणा, विलासिनी विचक्षणा।

कला-कलाप-सारिणी, प्रियानुरागपालिनी।

कटाक्षलक्षमोचना, सरोजपत्रलोचना।

विलासहास-मण्डिता, मनोजतन्त्र पण्डिता।। 18।।

दीर्घकेशाः कपाले, कुटिल-कोमल-घनश्यामलाः

दर्पमत्त-कन्दर्पः धनुषि यथा अबध्नात् चामरम्।

निष्कलङ्कशशिबिम्ब-सदृशं सुन्दरं मुखमण्डलम्

प्रियानुरागं कथयती श्रवणे दोलते द्वे कुण्डले।।

गुरुपीन पयोधर भारभरैः मत्तमतङ्गज-मन्दगतिः।

संसारसार-शृंगाररसस्वरूपा कतमस्य चित्तं न हरति युवतिः।। 19 ।।

हिन्दी- गोपियाँ चल रही हैं जो मतवाले हाथी के समान गतिवाली हैं, सभी दोषों को दूर कर चुकी हैं, विलास एवं हास से भूषणवाली हैं, कानों में सोने की कुण्डल पहनी हैं। स्वामी (पति) की गोद को शोभित करने वाली हैं, दूसरों की दृष्टि पात से शङ्कित हैं और झनझनाती किङ्किणी (करधनी) पहनी हुई हैं।। 17।।

सभी उत्तम लक्षणों से शोभित हैं, विलासिनियों में चतुरा हैं, कला के कलापों (समूहों) में विचरण करती हैं, प्रियके अनुराग (स्नेह) का पालन करती हैं, लाखों कटाक्ष छोड़ती हैं, कमल-पत्तियों के समान आँखवाली हैं, विलासपूर्ण हास से शोभित हैं और कामशास्त्र में पण्डिता (बुद्धिमती) हैं।। 18।।

बड़े टेढ़े घनश्यामल कोमल केश कपार पर लटके हैं, लगता है कि दर्प से उन्मत्त कामदेव ने अपने धनुष पर चँवर बान्ध रखा है। निष्कलङ्क चन्द्रमण्डल

के समान सुन्दर (नायिका का) मुखमण्डल है। उसके कानों में दो (=बे=द्वे) कुण्डल डोल रहे हैं, जो प्रिय के अनुराग को व्यक्त करते जान पड़ते हैं। भारी एवं पुष्ट स्तन के भार के कारण मतवाले हाथी के समान मन्द गति से चलती हुई वह युवती संसार के सारस्वरूपशृंगार रस के रूप में स्थित किसके मन को नहीं हर लेती है ?।। 19।।

मैथिली- गोपीसभ चलैत अछि जे मत्ता हाथीक समान मन्द गति वाली अछि। ओ सकल दोषकेँ दूर कएने अछि, विलासमय हासे ओकर भूषण अछि। कानमे सोनाक कुण्डल पहिरने स्वामीक अंक (कोरा) केँ भूषित कएने अछि, दोसराक दृष्टिपात सँ सशंकित ओ झनझनाइत डँरकस पहिरने अछि।। 17 ।।

सब उत्तम लक्षण सँ सुशोभित अछि, विलासिनी सबमे चतुरा अछि, कलाक कलाप (समूह) मे विचरण करैत अछि, प्रियक अनुराग (स्नेह)क पालन करैत अछि, लाखो कटाक्ष छोड़ैत अछि, कमलक पत्ती सन आँखिवाली अछि, विलासमय हास सँ शोभित अछि आ कामशास्त्रक पण्डिता (निपुणा) अछि।। 18 ।।

पैघ-पैघ टेढ़ कोमल घनश्यामल केश कपार पर लटकि रहल छैक, से लगैत छैक जे दर्प (अहंकार) सँ उन्मत्त कामदेव अपन धनुष पर चामर बन्हने होथि। निष्कलंक चन्द्रमाक समान सुन्दर ओकर (नायिकाक) मुखमण्डल छैक। ओकर कान मे दुइ (बे=द्वे) कुण्डल डोलि रहल छैक जे प्रियक अनुरागकेँ कहैत अछि। भारी एवं पुष्ट स्तनक भारक कारण मत्ता हाथीक समान मन्द गति सँ चलैत ई युवती संसारक सारस्वरूप शृंगार रसक रूपमे स्थित ककर मनकें नहि हरैछ ?।। 19 ।।

काबि एक अगुसरइ, काबि अउकिहि धरि पेरइ
काबि आबि पुनु पाछु, पलटि खन अद्धे हेरइ।
काबि धरइ धम्मिल्ल पुनबि बन्धइ रसना धरि
मन्द हा<u>से</u> मुख मण्डि, विविहि परिहासक आगरि।।
मन्दालसगति काबि पुनु, नूपुर आरवे गगन भर।
चल-बाहु-बलअ झङ्कार रव, सुतल जगाबइ पञ्चसर।। 20 ।।

(दोहा)

एक मुरारि अनेक धनि, जउवन मद़े सानन्द।
सफल करउ सिङ्गार रस, णं तारा मह चन्द॥ 21॥

छन्द (हरिगीतिका)

जहिं काबि नारि महामहोसव, कलाकौतुक खेल्लई।
अपरा मनोभव भाव भोर निकुञ्ज कन्दुक पेल्लई॥
परिहासे पेसलि रङ्ग जोअइ, जुवति नागरि लक्खने।
पिअतमे निहारलि, हृदय लाउलि, हसइ हेरइ तक्खने॥ 22॥
किछु आस दइए विलास चुक्कइ, कनक गोरनि कामिनी।
अति महघि भए किछु महते पाउलि, मत्तकुञ्जरगामिनी॥
धम्मिल्ल भरि पिअ आस आनलि, आङ्ग विब्भम मोलई।
चल केलिकातर पलटि हेरइ, पेमतन्तु न तोलई॥ 23॥
आकम्मे पाउलि, हिअए लाउलि, परम परिभव मानई।
मधुपान-लोलुप, अधर दंसलि, हरखेँ किम्बि ण जानई॥
खर नखरे खण्डिअ, रेह मण्डिअ, थोल थनहर गोअई।
सन्तोष रोस विसेस विब्भम, हसइ निससइ रोअई॥ 24॥
रतिभावे भरे रोमाञ्च अञ्चिअ, पानि परसिअ नाअके।
निज भञुह भाङ्गि कटक्खे मारइ, मम्मभेदिअ साअके॥
घनसार चन्दन कुङ्कुमागुरु, नअन कज्जले भूसिआ।
मनमोह कारन मअने सिरिजलि, मान केवल दूसिआ॥ 25॥

छाया :-

कापि एका अग्रे सरति, कापि अपरामेव धृत्वा प्रेरयति।
कापि आगत्य पुनः पश्चात्, परावृत्य क्षणम् अर्धमेव पश्यति।
कापि धरति धम्मिल्लं, पुनरपि बध्नाति रसनां धृत्वा।
मन्दहासेन मुखं मण्डयित्वा विविध परिहासस्य आकरा॥
मन्दालसगतिः कापि पुनः नूपुरस्य आरवेण गगनं भरति।

चलद्बाहुबलय-झङ्कार-रवेण, सुप्तं जागरयति पञ्चशरम्।। 20।।
एको मुरारिः अनेकाः धन्याः, यौवन-मदेन सानन्दाः।
सफलं कृतवान्शृंगाररसं, ननु तारामध्ये चन्द्रः।। 21।।
यत्र कापि नारी महामहोत्सव कलाकौतुकं खेलति।
अपरा मनोभवभावविह्वला, निकुञ्जे कन्दुकं प्रेरयति।।
परिहास-पेशला रङ्गं योजयति, युवती नागरी-लक्षणा।
प्रियतमेन निरीक्षता, हृदये आतीता, हसति पश्यति तत्क्षणम्।। 22 ।।
काञ्चिद्आशां दत्वा विलासाद्-वञ्चयति, कनक-गौराङ्गी कामिनी।
अतिमहार्घा भृत्वा किञ्चिद् महत्त्वं प्राप्ता, मत्त कुञ्जरगामिनी।।
धम्मिल्लं धृत्वा प्रियपार्श्वम् आनीता, अङ्गविभ्रमं मोटयति।
चलति केलिकातरा, परावृत्य पश्यति, प्रेमतन्तुं न त्रोटयति।। 23।।
आलिङ्गनं प्राप्ता हृदये आनीता, परम-परिभवं मानयति।
मधुपान-लोलुपेन अधरे दष्टा, हर्षेण किमपि न जानाति।।
खर-नखर-खण्डित-रेखया मण्डिता, स्थूलं स्तनघटं गोपयति।
सन्तोष-रोष-विशेष-विभ्रमैः हसति, निःश्वसिति रोदिति।। 24।।
रतिभावभरेण रोमाञ्चमञ्चिता, पाणौ स्पृष्टा नायकेन।
निजभ्रुवं भङ्क्त्वा कटाक्षेण मारयति, मर्मभेदिना सायकेन।।
घनसार-चन्दन-कुङ्कुमागुरुभिः नयनयोः कज्जलेन भूषिता।
मनोमोह-कारणाद् मदनेन सृष्टा, मानेन केवलं दूषिता।। 25।।

हिन्दी- कोई एक युवती आगे बढ़ती है, तो कोई किसी दूसरी युवती को ही पकड़कर प्रेरित करती है। कोई पीछे में आकर फिर मुड़कर क्षणभर अर्धदृष्टि से ही देखती है। कोई (नायक के) केशपाश को धरती है, फिर कमर पकड़कर (बाहुपाश में) बाँधती है। मन्द मुस्कान से मुख को शोभित कर अनेक परिहासों का भण्डार बनती है। कोई मन्द अलसायी हुई (नायिका) अपने पायल की झुनझुन आवाज से आकाश को भर देती है और चञ्चल बाहु के कारण कगनों के झंकार के शब्द से सोये हुए कामदेव को जगा रही है।। 20।।

कृष्ण एक हैं और नायिकाएं अनेक हैं, जो यौवन के मद से आनन्दित हैं। तबश्रृंगार रस को सफल बना दिया जैसे ताराओं के बीच चन्द्र सफल रहता है।। 21।।

जहाँ कोई नारी इस विशाल महोत्सव में कलापूर्ण कौतुक (विस्मयकारी खेल) खेल रही है, दूसरी कामवश भावविभोर होकर निकुञ्ज (लतागृह) में गेन्द उछाल रही है। परिहास करने में पटु (पेशला) है, विलासगोष्ठी (रङ्ग) का आयोजन करती है तथा चतुरनायिका के लक्षण से युक्त है। प्रियतम के द्वारा देखी गयी, हृदय लगायी गई वह युवती उस समय हँसती और देखती है।। 22।।

कुछ आशा देकर वह स्वर्णगौराङ्गी कामिनी विलास करने में ठग लेती है। (मान के द्वारा) अत्यन्त मँहगी बनकर कुछ अधिक महत्त्व पा लेती है। वह मत्ता हाथी के समान चलने वाली, सखियों के द्वारा केशपाश सजायी हुई प्रिय के पास लायी गयी। तब अस्तव्यस्त रूप से अंगों को मोड़ती है। केलि से कातर (दीनभाव) होकर चलती हुई मुड़कर देखती है पर, प्रेम के तन्तु को तोड़ती नहीं।। 23।।

आलिङ्गन प्राप्त की, हृदय में लगायी गयी, जिसे वह परम कष्ट मानती है। मधुपान के लालच में नायक ने उसके अधर को दातों से दबा लिया, पर वह हर्ष के कारण कुछ भी नहीं जान रही है। तीखे नहों से खण्डित रेखाओं से शोभित पुष्टस्तन घट को झाँपती है। सन्तुष्टि, क्रोध एवं विशेष घबड़हाट के कारण हँसती है, निसास लेती और रोती है।। 24।।

रतिभाव भरे रोमाञ्च से शोभित नायक ने उसका हाथ पकड़ लिया। (तब उस मुग्धा नायिका ने) अपने भौंहं को तिरछाकर मर्मभेदी बाण स्वरूप कटाक्ष मार दी। वह कपूर, चन्दन, कुंकुम, अगुरु आदि से शोभित है तथा उसके आखों में काजल शोभित हैं। उसे कामदेव ने मन को मोहने के लिए ही बनाया है। वह केवल मान के कारण की दूषित (मानवती) है।। 25।।

मैथिली- ओहि (युवतीक समूह) मे कोनो एक युवती आगू बढ़ैत अछि, केओ दोसराकें (अउकिहि) पकड़ि आगू बढ़बाक लेल प्रेरित करैछ, केओ पाछू आबि पलटि कए छन भरि आधे दृष्टिसँ देखैत अछि, केओ नायकक केशपाशकें पकड़ैत अछि, फेर डाँर धए अपन बाँहिमे बान्हि लैत अछि, केओ मन्द मुस्की सँ मुँहकें शोभित कए अनेक हास-परिहासक भण्डार

बनैत अछि, केओ नायिका मन्द अलसाएल अपन पायलक झुनझुन शब्द सँ आकाशकें भरि दैत अछि आ केओ बाँहिक चञ्चलताक कारण कगनाक झंकारक शब्दसँ सुतल कामदेव कें जगाए रहल अछि।। 20 ।।

कृष्ण एक छथि आ धनि=धन्या नायिका अनेक अछि जे यौवनक मदसँ आनन्दित अछि ओ (नायक) शृंगार रसकें सफल बनबैत छथि जेना ताराक बीच चन्द्र सफल होइत रहैत छथि।। 21 ।।

जाहि गोपीक समुदायमे कोनो एक नारी एहि महान् उत्सव मे कलाप्रदर्शन करैत कौतुक (विस्मयकारी खेल) खेलाए रहल अछि, दोसर नारी कामवश भावविभोर भए निकुञ्ज (लतागृह) मे गेन फेकि रहल अछि आ आन युवती परिहास करबामे निपुण (पेशल) अछि, विलासगोष्ठीक आयोजन करैत अछि, चतुरनायिकाक लक्षणसँ युक्त अछि। ई सब प्रियतम द्वारा देखलि गेल, हृदय लगाओल गेल। ओहि काल (तँखणे=ताहि क्षणमे) ओ सब हँसैत ओ तकैत अछि।। 22 ।।

नायककें किछु आशा दए ओ सोन सन गोरि कामिनी विलास करबामे ठकि लैत अछि, मानसँ अत्यन्त महग भए (मानिनी बनि) किछु अधिक महत्त्व पाबि लैछ। मत्ता हाथीक समान चलए वाली ओहि नायिकाक केश साजि प्रियक लग सखी सब अनलक। ताहि काल ओ अस्त-व्यस्त अपन देहकेँ मोड़ैत अछि, केलि सँ कातर (दीनभाव) भए चलैत घुड़िकए देखैत अछि, मुदा प्रेमक सूतकेँ तोड़ैत नहि अछि।। 23 ।।

ओ नायकक आलिंगन पओलक, हृदयमे लगाओल गेल जकरा ओ परम कष्ट मानैत अछि (कियेक त मुग्धा=कम वयसक अछि)। मधुपानक लोभमे नायक ओकर ठोरकें दाँत सँ दबाए देलक, मुदा आनन्दक कारण ओ एहि कष्टकें बुझिओ ने सकल। ओ नायकक तेज नह सँ लागल नोंछाड़ सँ शोभित स्तन घट कें झँपैत अछि। सन्तोष, क्रोध एवं हड़बड़ाए उनटा-पुनटा चेष्टाक कारण हँसैत अछि, निसास लैत अछि आ कनैतो अछि।। 24 ।।

रतिभाव भरल रोमांच सँ शोभित नायक ओकर हाथ पकड़ि लेलकै। तखन ओ मुग्धा नायिका अपन भौंह केँ टेढ़ कए मर्मभेदी बाणस्वरूप कटाक्ष चला देलक। ओ कर्पूर, चानन, कुंकुम, अगरु आदि सँ शोभित अछि

तथा ओकर आँखिमे काजर शोभित अछि। ओकरा कामदेव मनकें मोहबेक लेल बनओने छथि। ओ केवल मानक कारण दूषित अछि।। 25 ।।

(षट्पद छन्द)

रूपक आगरि नारि, कुसुमसर तन्ते बखानिअ।
दप्पे मत्त कन्दप्पे, जासु गुने अप्पन जानिअ।।
चन्दने चन्द चकोर कमल कञ्चने मिलि साजिअ।
रअन-बलअ झङ्कार, ध्यानगत मुनिमन भाजिअ।
निअ नअन-बअन-कर-चरन गति, जेहि जखने किछु भाव धर।
तारुन्न कहानी का कहञु, तेहि जुवति परचित्त हर।। 26।।

(रड्डा + जयकरी छन्द)

ताहि नागरिन्हि करो सङ्ग।। 0।।
दए सम्भोग आनन आनन्द।
जनि कुमुदिनि-वन ऊगल चन्द।
बहुल नूपुर मेखला बाज।
नृत्य गीत कूतूहले छाज।। 27।।
एक देखए अओकिक रङ्ग।
जनि जागि ऊठल सुतल अनङ्ग।।
मानक उपर मन्मथक धार।
लज्जा लुकिअ पैसि पाताल।। 28।।

(षट्पद छन्द)

काहु धरए धम्मिल, काहु अञ्चल धरि खञ्चए।
काहु मनोरथ पूर, काहु आसा दए वञ्चए।।
काहु सदअ अवलोक, काहु निद्दअ आलिङ्गए।
काहु रोस दरसाए कुटिल भोञुह भरे भङ्गए।।
सन्तोष पूर रति विविह परि, काहु उबारए काहु हस।
पतिविम्ब सरोरुह चन्द जञो, एक कान्ह सब हिअए बस।। 29 ।।

संस्कृतम् (अनुष्टुप् छन्दः)

एकः पुमान् स्त्रियोऽनेका अत्यासक्तिश्च वर्धते।
तस्मान्नृत्यैश्च गीतैश्च कौतुकैः प्रेर्यते निशा।। 30।।

(गद्यम्)

अथ ताल-मानाक्षराकारेण हस्तक-मस्तकानुसारेण गीतादीनभिनयन्ती, आङ्गिकादि-चातुरीं दर्शयन्ती, भ्रूलता-विवर्त्तानुवर्त्तिनीभिः सफरी-तरङ्गतरलाभिः कलाभि र्दिशः शुभ्रयन्ती, कदाचित् स्वरविशेषमूर्च्छनाकुलिताम् अग्रोन्नत-स्तनमण्डलार्पितां वीणां सारयन्ती, श्रवणरमणीयं गायन्ती काचिद् आनयति वारि, काचिदुपनयति कुसुमं, काचिल्लीला-चलद्वलय-झङ्कारमुखरं वीजयति चारु चामरम्, वर्षति चन्दनासारशीकरम्, नृत्यति, हसति, भूषयति, हासयति, हृदयान्नमति हृदये, सम्पूरयति च रससम्भोगेन कान्तमनोरथम्।। 31।।

छाया:-

रूपस्य आकरीभूता नारी, कुसुमशरतन्त्रे व्याख्याता।
दर्पमत्तः कन्दर्पः यस्या गुणम् आत्मीयं ज्ञातवान्।
चन्दन-चन्द्र-चकोर-कमल-काञ्चनानि सम्मेल्य सज्जितवान्।
रत्नबलयझङ्कारेण, ध्यानगतं मुनिमनो भञ्जितवान्।।
निजनयन-वचन-कर-चरणगतिभिः या यत्क्षणे कञ्चिद् भावं धरति।
तारुण्यकथां किं कथयानि, सा युवतिः परचित्तं हरति।। 26।।
तासां नागरीणां सङ्गे।। 0।।
दत्वा सम्भोगम् आननम् आनन्दयति।
यथा कुमुदिनीवने उदितः चन्द्रः।
बहुल-नूपुरा मेखला वाद्यते।
नृत्य-गीत-कूतूहलं सज्ज्यते।। 27।।

एका पश्यति अपरस्याः रङ्गम्।
मन्ये जागृत्वा उत्थितः सुप्तः अनङ्गः।।
मानस्य उपरि मन्मथस्य धारा।
लज्जा लुक्किता प्रविश्य पातालम्।। 28।।

काञ्चिद्धरति धम्मिल्ले, काञ्चिद् अञ्चलं धृत्वा कुञ्चति।
काञ्चिद् मनोरथैः पूरयति, काञ्चिद् आसां दत्त्वा वञ्चयति।
काञ्चित् सदयम् अवलोकयति, काञ्चिद् निर्दयम् आलिङ्गति।
काञ्चिद् रोषं दर्शयित्वा कुटिलभ्रूभरेण भञ्जयति।।
सन्तोषं पूरयति विविध-प्रकारया रत्या काञ्चिद् उद्वारयति काञ्चिद् हसति ।
प्रतिविम्ब-सरोरुह-चन्द्रमिव, एकः कृष्णःसर्वस्या हृदये वसति।। 29।।

हिन्दी- अतिशय रूपवती नारी कामशास्त्र में वर्णित लक्षणों से पूर्णतः युक्त है । दर्प से मत्त कामदेव ने उसके गुण को अपना मान लिया है। चन्दन, चन्द्र, चकोर, कमल और सोना मिलकर ही इस नायिका को सजाया है। रत्न के कंगने की झंकार से वह ध्यानस्थ मुनियों के मन को भी भङ्ग कर देती है। वह अपने आँख, वचन, हाथ, पैर और चाल से जभी कोई चेष्टा करती है, तो उससे उसके यौवन की महत्ता कहाँ तक बतायी जाय, वह युवती तो दूसरों के मन को ही हर लेती है।। 26।।

उन चतुर नायिकाओं के समागम में (कृष्ण आनन्दित हैं)। (यह पंक्ति रड्डा छन्द का ध्रुवपद है)।

सम्भोग (समागम) देकर मुख को आनन्दित कर दिया है, जैसे कुमुदिनी के वन (नायिकाओं के मुख) में चन्द्रमा (नायक) उग गया हो। बहुतों पायल एवं करधनियाँ बज रही हैं। जैसे नाँच-गान उत्सव शोभ रहा हो।। 27।।

एक नारी दूसरी की कामक्रीड़ा देख रही है जैसे सोया हुआ कामदेव जागकर उठ पड़ा हो। ऊपर काम की धारा चल रही है, लज्जा तो लुक कर पाताल पैठ गयी है।। 28।।

(कृष्ण) किसी नायिका के केशपाश को पकड़ते हैं, किसी को आँचल पकड़कर खींचते हैं, किसी के मनोरथ पूर्ण करते हैं, किसी को आशा देकर ठगते हैं, किसी को दयाभरी दृष्टि से देखते हैं, किसी को निर्दयतापूर्वक कसके

आलिङ्गन देते हैं, किसी को रोष दिखाकर तिरछे भौंह से शासित करते हैं, सन्तोषपूर्वक विविध भाँति की रति (विलास) से किसी को उबार देते हैं तो किसी का उपहास करते हैं। (पानी में पड़ी) परछाँई स्थित कुमुदिनी एवं चन्द्रमा के (तरंगो पर अनेक होने के) समान एक ही कृष्ण (अनेक होकर) सबों के हृदय में बसते हैं।। 29 ।।

पुरुष एक और स्त्री अनेक हैं। विषय की अतिशय आसक्ति (आकर्षण) बढ़ रही है। अतः नाँच, गान और खेलों से रात वितायी जा रही है।। 30।।

अब संगीतशास्त्रीय ताल, मान (लय का सन्तुलन) और अक्षरों के रूप में हाथ एवं माँथे की विशेष अवस्थिति के अनुसार गीत आदि का अभिनय करती हुई, आङ्गिक आदि (शारीरिक, वाचिक, सात्त्विक एवं आहार्य) चतुरता को दिखाती हुई, भौंह रूपी लताओं के चढ़ाव-उतार के अनुसार चेष्टा करती हुई हजारों पोठी मछलियों से युक्त तरङ्गों के समान चञ्चल कलाओं से दिशाओं को चमकाती हुई (नायिका) कभी स्वर के विशेषभेद मूर्च्छना से युक्त ऊंचे अग्रभागवाले स्तनमण्डल पर रखी हुई वीणा को चलाती (बजाती) हुई, कर्ण सुखद गान करती हुई, कोई पानी लाती है, कोई फूल पहुँचाती है, कोई विलास के कारण चलते हुए कंगनों के झंकार से मुखर (शब्द करते हुए) हाथों से सुन्दर चँवर डुला रही है, कोई चन्दन की वृष्टि के फुहाड़ों की वर्षा करती है, नाँचती है, हँसती है, सजाती है, हँसाती है, हृदय से हृदयकी ओर झुकाती है और रस सम्भोग से प्रिय के मनोरथ को परिपूर्ण कर देती है।। 31।।

मैथिली- अत्यन्त रूपवती नारी कामदेवक तन्त्रक (शास्त्रीय-कलाकौशलक) व्याख्यान कए रहल अछि। दर्प सँ मत्त कामदेव ओकर गुणकें अपन गुण मानैत छथि। चानन, चन्दमा, चकोर, कमल ओ सोना मिलिए कए एहि नायिका कें सजओलक अछि। रत्नजटित कँगनाक झंकार सँ ओ ध्यानस्थ मुनियोक मनकें भंग कए दैछ। ओ अपन आँखि, वाणी, हाथ, पएर आ चालि सँ जखने कोनो चेष्टा करैत अछि त ताहि सँ ओकर यौवनक महत्ता कतेक धरि कहल जाय, ओ युवती तँ दोसरक मनकें हरण कए लैछ।। 26।।

ओहि चतुर नायिकासभक संग नायक कृष्ण आनन्दित छथि। समागम दए मुखकें आनन्दित करैत अछि जेना कुमुदिनीक वनमे चन्द्रमा उगल होथि। बहुतो पायल ओ डँरकस (गहना) झुनझुन बजैत अछि। नाँच, गान ओ खेल शोभित भए रहल अछि।। 27 ।।

एक नारी दोसराक कामक्रीडा देखि रहल अछि जेना कामदेव सूति

कए उठल होथि। मानक ऊपर मे कामदेवक धारा (प्रगति) चलि रहल अछि, तें लाज नुकाए पाताल मे पैसि गेल अछि।। 28 ।।

कृष्ण कोनो नायिकाक केशपाश कें पकड़ैत छथि, ककरो आँचर धए घिचैत छथि, ककरो मनोरथ पुरबै छथि, ककरो आशा दए ठकि लैत छथि, ककरो दयादृष्टि सँ देखैत छथि, ककरो निर्दयतापूर्वक आलिंगित करैत छथि, ककरो रोष देखाए भौंह टेढ़ कए शासित करैत छथि, सन्तोषपूर्वक विविध भाँतिक रति (विलास) सँ ककरो उबारि दैत छथि आ ककरो उपहास करैत छथि। एहि तरहें पानिमे पड़ल छाहमे स्थित कुमुदिनी एवं चन्द्रमाक समान (तरंगमे अनेक चन्द्रक समान) एके कृष्ण अनेक भए सभक हृदयमे बसैत छथि।। 29 ।।

एक पुरुष ओ अनेक स्त्री एकठाम मिलित छथि। अत्यन्त आसक्ति (आकर्षण) बढ़ि रहल छैक। तें नाँच, गान एवं खेल सँ राति बिताओल जा रहल अछि।। 30 ।।

आब संगीतक ताल, मान (लयक सन्तुलन) आ अक्षरक रूपमे हाथ आ माँथक विशेष चेष्टाक अनुसार नायिका सब गीत आदिक अभिनय करैत, आङ्गिक आदि (शारीरिक, वाचिक, सात्त्विक ओ आहार्य) चतुरताकें देखबैत, भौंह रूपी लताक चञ्चलताक अनुसार चेष्टा करैत, हजारो पोठी माछसँ युक्त तरङ्गक समान चञ्चल कला सँ दिशा सबकें चमकबैत, कखनो स्वरक विशेष भेद मूर्च्छनासँ युक्त ऊँच शिखरवाला स्तनमण्डल पर राखल वीणा कें बजबैत, कर्णसुखद गान करैत ओहि मे सँ केओ (नायिका) पानि अनैत अछि, केओ फूल पहुँचबैत अछि, केओ विलासक कारण चलैत कँगनाक झनकार सँ युक्त हाथसँ सुन्दर चामर डोलबैत अछि, केओ चन्दनक फूही झहरबैत अछि, केओ नचैत अछि, हँसैत अछि, सजबैत अछि, हँसबैत अछि, हृदय सँ हृदय धरि झुकैत अछि आ रसमय सम्भोग सँ प्रियतमक मनोरथकें पूर्ण करैछ।। 31 ।।

(रड्डा छन्द)

सब लज्ज चुण्ण मअन आवेअ।।

लोमाञ्चिअ भुअ-जुअल, पुलक भारभरे बलअ भङ्गिअ।

नाना बन्ध विबन्ध, अङ्के-अङ्के, संघटिअ लग्गिअ॥
घम्म-सलिले तनु तित्तिअउ, किअउ कितारथ काम।
दुन्नु मन्द भउ चेतना, केलि समर उद्दाम॥ 32॥
किअउ चुम्बन धरिअ धम्मिल्ल॥
पीनत्थन परिभमिअ, हार हिअअ अरुझाए खण्डिअ।
लोमाञ्चिअ दुहु देह, बाहुमूले नखरेहे मण्डिअ॥
लज्जञे छड्डिअ कामिनी, करुणाञे छड्डिअ कन्त॥
महामहोसव सम्पजिअ, काम लहिअ पज्जन्त॥ 33॥
नील कुवलअ वण्ण तनु कन्ह॥
सामरि तरुणी सङ्ग, उभय मेलि कसकन्ति बड्ढिअ।
रुचिर मनी रमणीय, माधव रतिसञो कमने कड्ढिअ॥
चुम्बन मिलिअउ उभय मुख, चन्द सरोरुह मेलि।
सुख अनुभव पुनवन्त जन, कामकला रसकेलि॥ 34॥
लुद्ध नाअक माँग परिरम्भ।
धनि काअरपन करिअ, न न न भनइ करे कर निवारइ।
नअने विमुञ्चइ नीर, केलिकला नहु सहए पारइ॥
नारि नवोढ़ा पिअ सबल अनुचित रसिक-अनङ्ग।
उभय समागम सम्पजिअ, काम लहिअ नहि रङ्ग॥ 35॥

छन्दः (तोटक)

अरुझाएल केस-कलाप तहा।
गअ-गञ्जिअ नीर सेमार जहा॥
अति चुम्बने आनन निम्महिआ।
जनि चन्दसुधा सुरलोअ लिआ॥ 36॥
पुनु माधव-सिद्धि सुसोभ मही।
अरु लोचन कज्जरु लागु तही॥

नव नील सरोरुह पत्त जहा।

कुच-मण्डल मण्डिअ रेह तहा॥ 37॥

तरुनी तनु कान्त विमद्द करे।

गञे गञ्जिअ पङ्कअ कन्ति धरे॥

मुखचन्दक चङ्गिम विस्सरिआ।

जनि राहु गिलिअ ससि निस्सरिआ॥ 38॥

अति निस्सह देह परिस्समही।

अनुमापिअ सङ्गमे निब्भमही॥

वर चन्दक चङ्गिम चारु जबे।

अनुरूप समागम देक्खु तबे॥ 39॥

कहिं कातर का...॥ 40॥

छाया-

सर्वा लज्जा चूर्णा मदनावेगे॥

रोमाञ्चितं भुजयुगलं, पुलक-भार भरेण बलयौ भग्नौ।

नाना बन्ध-विबन्धैः अङ्गेनाङ्गं संघट्य लग्नम्॥

घर्मसलिलैः तनुः आद्रीर्भूता, कृतवान् कृतार्थं कामः।

द्वयोरपि मन्दा चेतना, केलिसमर उद्दामे॥ 32॥

कृतं चुम्बनं धृत्वा धम्मिल्लम्।

पीनस्तन-परिभ्रमितो हारो हृदये अवरुद्ध्य खण्डितः।

लोमाञ्चितौ द्वयो र्देहौ, बाहुमूलं नखरेखाभि र्मण्डितम्॥

लज्जां त्यक्तवती कामिनी, करुणां त्यक्तवान् कान्तः।

महामहोत्सवः सम्पद्यते कामो लभते पर्यन्तम्॥ 33॥

नील-कुवलय-वर्णतनुः कृष्णः॥

श्यामली तरुणीसङ्गे, उभय मेलनं निकषकान्तिं वर्धयति।

रुचिरमणी रमणीयो माधवो, रत्या कतमां कर्षयति॥

चुम्बनेन मिलितम् उभय-मुखं, चन्द्र-सरोरुह-मेलनम्।
सुखम् अनुभवति पुण्यवान् जनः, कामकला रसकेलिम्।। 35।।
लुब्धो नायको याचते परिरम्भम्।।
धन्या कातरत्वं करोति, न न न भणति, करेण करं निवारयति।
नयनाभ्यां विमुञ्चति नीरं, केलिकलां नहि सोढुं पारयति।।
नारी नवोढ़ा, प्रियः सबलः, अनुचितो रसिकस्य अनङ्गः।
उभय-समागमः पम्पद्यते, कामो न लभते रङ्गम्।। 34।।
अवरुद्धः केशकलापः तथा।
गज-गञ्जितो नीरे शैवालो यथा।।
अतिचुम्बेन आननं निर्मथितम्।
यथा चन्द्रसुधा सुरलोकेन गृहीता।। 36।।
पुनः माधव-सिद्धि-सुशोभिता मही।
अपरं लोचने कज्जलं लग्नं तत्रैव।।
नव-नील-सरोरुह-पत्रं यथा।
कुचमण्डले मण्डिता रेखा तथा।। 37।।
तरुणीतनुः कान्तेन विमर्दिता करेण।
गजेन गञ्जितस्य पङ्कजस्य कान्तिं धरति।।
मुखचन्द्रस्य चङ्गिमा विस्मृता।
यथा राहुणा गिलितः शशी निस्सृतः।। 38।।
अति निस्सहो देहः परिश्रमेणैव।
अनुमाप्यते सङ्गमो निर्भ्रमेणैव।।
वरचन्द्रस्य चङ्गिमा चारु र्यदा।
अनुरूपं समागमं पश्य तदा।। 39।।
कुत्र कातरा कामिनी...।। 40।।

हिन्दी- कामवासना के आवेग (उत्कटता) में सभी लज्जाएँ चूर्ण हो गयीं। दोनों भुजाएँ रोमांचित हैं, आनन्दमय भार पड़ने से कंगन टूट गये। (समागम के समय) अनेक बन्धों में बंधे रहने के कारण अंग-अंग संघटित होकर मिल गए हैं। पसीना के पानी से शरीर भींग गया है। कामदेव ने इन्हें कृतार्थ (सफल) कर दिया है। इस उत्कट केलि के युद्ध में दोनों की चेतना मन्द पड़ गयी है (बेहोश हैं)।।32।।

(नायक ने नायिका का) केशपाश पकड़ कर चुम्बन कर लिया है। पुष्ट स्तन पर घूमकर, हृदय पर उलझा हुआ हार टूट गया है। दोनों देह रोमांचित हैं। बाँह का जड़ नखेरखा से मण्डित है। कामिनी लज्जा छोड़ चुकी है, जबकि प्रियनायक दया छोड़ चुका है। विशाल महोत्सव हुआ है और काम चरम सीमा को पा चुका है।। 33।।

नील कमल के वर्ण के समान देहवला कृष्ण है। श्यामली तरुणी के साथ तरुण कृष्ण का मेल कान्ति को किस प्रकार बढ़ा रहा है। आकर्षक मणि के समान सुन्दर माधव प्रेम से किसे खींचता है। चुम्बन के समय दोनों के मुख मिल गये, चन्द्रमा और कुमुद पुष्प का मिलन है। इस कामकला के रसपूर्ण विलास सुख का अनुभव पुण्यवान् व्यक्ति ही कर सकते हैं।।34।।

लुभाया हुआ नायक आलिङ्गन मांगता है। नायिका कातरता (दीन भाव) करती है, ना ना ना कहती है, हाथ से हाथ को रोकती है, आँखों से आँसू गिराती है और केलिकला को सह नहीं पा रही है। नारी किशोरी (कम अवस्था की) और प्रिय सबल (पूर्ण युवा) है। इस स्थिति में रसिक का कामोद्दीप्त होना अनुचित है। फिर भी यदि दोनों का समागम हो जाता है तो काम अपना रङ्ग नहीं पाता है।।35।।

नायिका के केशपाश ऐसे उलझ गये हैं, जैसे जल में हाथी के द्वारा रौंदा गया सेमार (शैवाल) हो। नायक ने अतिशय चुम्बन से मुख को ही निर्मथित कर लिया है, जैसे चन्द्रमा के अमृत को देवलोक ने ले लिया हो।। 36।।

फिर माधव (कृष्ण) की सिद्धि से पृथ्वी सुशोभित हो गयी है और आँख का काजल (उनके मुँह पर) लग गया है। जैसे नवीन नीलकमल के पत्ते होते हैं वैसे ही स्तन मण्डल पर रेखा (नखक्षत) शोभित है।। 37।।

कान्त (प्रिय) के हाथों से मर्दित तरुणी का देह, हाथी से रौदें कमल की कान्ति को धारण करता है।। मुखचन्द्र का चमक खो गया है जैसे राहु के द्वारा निगला हुआ चन्द्रमा फिर निकल गया हो।। 38।।

परिश्रम के कारण देह अलसाया निश्चल है। निश्चय ही इससे समागम का अनुमान हो रहा है। सुन्दर चन्द्रमा के समान चमक जब रहे, तभी यथोचित समागम देखा जा सकता है।। 39।।

कहाँ यह कातरा (अबला) कामिनी और कहाँ (वह प्रौढ़ नायक) ? ।। 40 ।।

मैथिली- कामवासनाक आवेग मे नायिकाक सबटा लाज चूरचूर भए गेलैक। दुनू बाँहिक रोइयाँ भुटकि गेलैक, प्रियनायकक भारक कारण कँगना टूटि गेलैक। समागमक समय मे अनेक बन्ध सँ बान्हल रहबाक कारण दुनूक अंग-अंग समटाए मिलि गेलैक। घामक पानिसँ देह भीजि गेलैक। कामदेवकें ई दुनू कृतार्थ (सफलमनोरथ) कए देलक। दुनूक चेतना (ज्ञान, होश) एहि उद्दाम (अत्यन्त) केलियुद्ध मे मन्द पड़ि गेल छैक।। 32 ।।

नायिकाक केशपाश धए नायक चुम्बन कए लेलक। ओकर पुष्ट स्तन पर घुमि कए हृदय पर ओझराएल हार टूटि गेल। दुनूक देह रोमांचित अछि। बाँहिक जड़ि भाग नहक चेन्ह सँ भूषित अछि। कामिनी लाजकेँ छोड़लक आ कान्त (प्रिय) दयाकेँ छोड़ि देलक अछि। विशाल महोत्सव सम्प्राप्त अछि आ काम अपन चरम सीमा पर पहुँचि गेल अछि।। 33 ।।

नील कमलक रंगक समान कृष्ण नील छथि। श्यामली तरुणीक संग तरुण कृष्णक मिलन कसौटी पाथरक कान्ति बनि रहल अछि। सुन्दर मणिक समान सुन्दर माधव रातिक संग ककरा आकर्षित कए रहल छथि । चुम्बन मे दुनूक मुख मिलि गेल जे चन्द्रमा ओ कुमुदिनी फूलक मेल हो, एहन कामकला रसकेलि सुखक अनुभव पुण्यवाने लोक कें होइत छनि।। 34।।

लोभाएल नायक आलिंगन मङैत अछि। नायिका कातर भाव (अक्षम भए दीनता) प्रकटित करैछ, 'नहि-नहि' करैछ, हाथ सँ हुनक हाथकें रोकैछ, आँखि सँ नोर खसबैछ, केलिकला कें सहि नहि पबैछ। नारी किशोरी अछि आ प्रियनायक सबल (पूर्ण युवा) अछि। दुनूक समागम सम्प्राप्त अछि, काम अपन रंग नहि लाबि रहल अछि।। 35 ।।

नायिकाक केशपाश तेना ओझराए गेल अछि जेना जलमे हाथीक द्वारा मचोड़ल सेमार हो। नायक अतिशय चुम्बनसँ मुँहकें मथि देलक अछि जेना चन्द्रमाकें मथि हुनक अमृतकें देवगण पीबि गेल होथि।। 36 ।।

फेर माधवक कार्यसिद्धि सँ ओ स्थान शोभित अछि आ नायिकाक आँखिक काजर हुनका (कृष्णकें) लागि गेल अछि। नवीन नीलकमलक पात जेकाँ नायिकाक कुचमण्डल पर नहक रेखा शोभित अछि।। 37 ।।

तरुणीक देहकें प्रियतम हाथें मर्दित करैछ, से हाथीसँ मचोड़ल कमलक कान्तिकें धारण करैछ। मुखचन्द्रक सौन्दर्य विसराए गेल अछि जेना राहुक गीरल चन्द्रमा निकलल होथि।। 38 ।।

परिश्रमक कारण नायिकाक देह अलसाएल अछि। एहिसँ निश्चित रूपें संगमक अनुमान कएल जा सकैछ। पूर्णचन्द्रक (नायिकाक मुखक) शोभा जखन नीक जकाँ निखरैछ तखने अनुरूप समागम देखल जा सकैछ।। 39।।

कतए ई कातरा (भयभीत) किशोरी (मुग्धा) नायिका आ कतए ओ पूर्ण युवा नायक? एहि दुनूक समागम समुचित नहि थिक।।40।।

–अपूर्ण–

(3)

विद्यापतिकृत
कीर्तिपताका

चतुर्थ विलास

(चञ्चला छन्द)

........................तोरि दाम।
फोलि वूह हाथि-जूह, घाअ दन्ते ठामे ठाम॥
वीर गज्ज, वद्द बज्ज, सज्ज होन्ते साहिबान।
विज्जु नाञि चाप सञ्च, मेह नाञि मुञ्च बान॥ 1॥
भल्ले भल्ल, मल्ले मल्ल, खग्गे खग्ग कुन्ते कुन्त।
अस्सवारे अस्सवार, पत्ति पत्ति मारि होन्त॥
पाअ-पाअ आगु जाए, घाअ घालि वीर रुट्ठ।
दन्ति-दन्ते शुण्डे मार, खग्ग धार अग्गि उट्ठ॥ 2॥
मुण्ड रुण्ड खण्डे खण्ड, फुट्टि फुट्टि जाइ भूमि।
सोनिञा पवाह वेग, फेन उट्ठ घूमि घूमि॥
पुण्ण रोस दण्डे मार, खग्ग धारे भेद पाब।
मुण्डे मुण्ड मेइनी, कबन्ध अद्ध आगु धाव॥ 3॥

संस्कृतच्छाया

..........त्रोटयित्वा दाम।

स्फोटयित्वा व्यूहं हस्तियूथो घातयति दन्तेन स्थाने स्थाने।।

वीरो गर्जति, वाद्यं वाद्यते, सज्जीभवन्ति स्वामिनः।

विद्युदिव चापं सञ्चिन्वन्ति, मेघ इव मुञ्चन्ति बाणान्।। 1।।

भल्लै र्भल्लाः मल्लै र्मल्लाः खड्गैः खड्गाः कुन्तैः कुन्ताः।

अश्ववारैः अश्ववाराः, पत्तिभिः पत्तयः, युद्धं भवति।

पद्भ्यां पद्भ्याम् अग्रे गत्वा, घातं हत्वा वीरो रुष्टः।

दन्तिनो दन्तैः शुण्डैश्च च मारयन्ति, खड्गधाराभिः अग्निः उत्थितः।। 2 ।।

मुण्डा रुण्डाः खण्डाः खण्डाः स्फोटं स्फोटं यान्ति भूमिम्।

शोणित-प्रवाह-वेगेषु, फेन उत्थितो घूर्णं घूर्णम्।।

पूर्ण-रोषेण दण्डैः मारयति, खड्गधारै र्भेत्तुं प्राप्नोति।

मुण्डै र्मुण्डैः व्याप्ता मेदिनी, कबन्धः अर्धः अग्रे धावति।। 3।।

हिन्दी- ....रस्सों को तोड़कर सैन्य-व्यूह (व्यवस्थित संघ) को फोड़कर हाथियों का झुण्ड अपने दाँतों से जगह-जगह पर आघात कर रहा है। वीर गरजते हैं, रणवाद्य बजते हैं और साहबलोग (महारथी सब) तैयार हो रहे हैं। बिजली के समान धनुष को तानकर, मेघ के समान बाणों को छोड़ रहे हैं।। 1।।

भलाओं के साथ भाला, पहलवानों के साथ पहलवान, खड्ग के साथ खड्ग, बर्छे के सथ बर्छा, घुड़सवारों के साथ घुड़सवार और पैदल सैनिकों के साथ पैदल पैदल सैनिक जूझ रहे हैं। पैदल ही पैदल आगे जाकर घात देकर वीर रुष्ट हैं। हाथी दाँतों और सूँढ़ों से मारते हैं, खड्ग के धार टकटकराने से आग उठती है।। 2।।

मुण्ड (कटा हुआ सिर) और रुण्ड (धर = सिर से नीचे का कटा हुआ भाग) खण्ड-खण्ड होकर, फूट फूटकर पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं। शोणित के प्रवाह के वेग से चक्कर खाकर फेन उठ रहे हैं। अतिशय क्रोध के कारण डंडे से प्रहार करते हैं, जिसे तलवार की धारा से काट पाते हैं। पृथ्वी पर मुण्ड ही मुण्ड है और मुण्डहीन शरीर का आधा भाग क्षणभर आगे दौड़ जाता है।।3।।

मैथिली- रस्सा कें तोड़ि, सैनिक व्यूह (संगठित सैन्य) कें फोड़ि स्थान-स्थान पर दाँत सँ मारैत हाथीक झुण्ड देखि पड़ैछ। वीर सब गरजैत छथि, रणक बाजा बजैत अछि आ साहेब लोकनि (सेनापति सब) तैयार होइत छथि। बिजलीक जेकाँ धनुष कें तानि कए मेघ जकाँ बाण छोड़ैत छथि।। 1 ।।

भाला सँ भाला टकराइत अछि, पहलमान सँ पहलमान लड़ैत अछि। खड्ग सँ खड्ग, बर्छा सँ बर्छा, घोड़सवार सँ घोड़सवार आ पैदल सैनिक सँ पैदल सैनिक भिड़ैत अछि, एहन मारि भए रहल अछि। पएरहि पएर आगू जाए आघात कए मारैत वीर सब रुष्ट होइत अछि। हाथी सभ दाँत ओ सूँढ़सँ मारैत अछि। तरुआरिक धार टकरएबा सँ आगि बहराइत अछि।। 2 ।।

मुण्ड (कटल मूड़ी) आ रुण्ड (मूड़ी छोपल घर) खण्ड-खण्ड भए फूटि-फूटि कए भूमि पर जाए रहल अछि। शोणितक प्रवाह वेग घूमि-घूमि=एम्हर ओम्हर चलैत अछि ओ ओहिमे फेन उठैत अछि। पूर्ण रोषक कारण वीर डंटा सँ मारैत अछि जकरा विरोधी सैनिक तरुआरि सँ काटि पबैछ। पृथ्वी पर मुण्डे-मुण्ड भरल अछि, मूड़ी कटल घर क्षण भरि आगू दौड़ि जाइत अछि।। 3 ।।

फप्फरन्त फेरवरी, पमत्त मांस खाइ खाइ।
अन्तजाल-माल-बद्ध, गिद्ध उद्ध उड्डि जाइ।।
रत्ते मत्ति डाकिनी-पलाप सङ्ग-सङ्ग भूअ।
नाच गाबि गाबि ताम, तामसें परेत हूअ।। 4।।

(षट्पद छन्द)

घन वज्जिअ रणतूल राअ सिवसिंह मारि करु।
कोटि सहसे घाइल्ल केसु जनि विकसु पुहवि-तरु।।
रुहिर नदी, ओत्त्थरिअ लोल कल्लोल वेअ रण।।
धलफल कम्प चणक्क, मुण्ड कर रत्तक तप्पण।
हुण्डाल विभालिअ वने परि, रन पवेस चतुरङ्ग बल।
घन घाइले आहवे पुहवि भरु, जे उब्बरु से पलाए चल।। 5।।

छाया-

फेत्करोति फेरवी, प्रमत्ता मांसं खादं-खादम्।
अन्त्रजाल-माला-बद्धो, गृध्र ऊर्ध्वम् उड्डीय गच्छति।
रक्तमत्त-डाकिनी-प्रजाप-सङ्गे संगता भूताः।
नृत्यन्ति गायं-गायं, ताम्राः तामसेन प्रेताः युक्ता भवन्ति।। 4।।
घनं वाद्यते रणतूर्यः, राजा शिवसिंहो मारं करोति।
कोटिसहस्रं घातिताः, किंशुको यथा विकसितः पृथ्वी-तरौ।।
रुधिर नदी अवतीर्णा लोल-कल्लोल वेगो रणे।
फरफरायिताः कम्पिता विदीर्णमुण्डाः कुर्वन्ति रक्तस्य तर्पणम्।
हुण्डार-विभालितं वनमिव, रणे प्रविशति चतुरङ्गबलम्।
घन-घातितैः आहवे पृथ्वी भरिता, ये उद्वृतास्ते पलाय्य चलिताः।। 5।।

हिन्दी- हुआ-हुआ शब्द करती हुई सियारनी (शृगाली)मांस खा-खाकर प्रमत्त हो गयी है। (मरे हुए लोगों के) आँत (अँतड़ी) के जाल की माला में बंधे गीध ऊपर उड़ जाते हैं। शोणित पीकर मत्त डाकिनी के प्रलाप (बड़बड़ाने) के साथ-साथ गाकर भूत नाँच रहे हैं और (यह देख) प्रेत सब क्रोध से तमतमा उठे हैं।।4।।

युद्ध के नगाड़े (रणतूर्य) जोर से बज रहे हैं। राजा शिवसिंह मार कर रहे हैं। करोड़ों हजारों घायल पड़े हैं। जैसे पृथ्वीरूपी पेड़ पर पलाश (किंशुक) का फूल विकसित हो गया हो। (घायल लोग शोणित से लाल हैं एवं पलाश का फूल भी लाल होता है)। शोणित की नदी बह रही है, उसमें वेग एवं चञ्चल तरङ्गों की रेखाएँ रणभूमि पर दीख पड़ती हैं। धड़फड़ा कर काँपते एवं चनकते (फूटते) हुए मुण्ड शोणित का तर्पण कर (पटाते जा) रहे हैं। भेड़ियों (हुण्डारों) से आक्रान्त वन की तरह रण में चतुरंग सेना प्रवेश कर रही है। घायलों की अधिकता से युद्ध की धरती भर गयी है, वहाँ जो बचा रहा, वह भाग गया।।5।।

मैथिली- फकसियारी कटैत (हुआ-हुआ शब्द करैत) सियारनी मांस खा-खा कए मदमत्त भेल अछि। (मुइल व्यक्तिक बहराएल) अँतड़ीक जालक माला सँ बान्हल गिद्ध ऊपर उड़ि जाइत अछि। शोणित पीबि मत्त डाकिनीक (उपद्रव करएवाली भूतिनीक) प्रलापक संगे संग भूत नचैत अछि आ गाबि गाबि कए तामस सँ प्रेत लाल भए गेल अछि।।4।।

रणवाद्य जोर सँ बाजि रहल अछि आ राजा शिव सिंह युद्ध कए रहल छथि। कड़ोरो हजार घाइल लोक पड़ल अछि, से लगैत छैक जेना पृथ्वी रूपी गाछ मे पलाशक फूल फुलाएल हो। शोणितक नदी बहि चलल अछि जाहि वेग एवं चंचल तरंगक रेखा सब रणभूमि पर देखि पड़ैछ। धड़फड़ाए कँपैत एवं चनकैत (फुटैत) मुण्ड शोणितक तर्पण कए रहल अछि। हुड़ारक आक्रमण सँ युक्त वन जकाँ रणभूमिमे चतुरंग सेना प्रवेश कए रहल अछि। घाइलक अधिकता सँ युद्धभूमि भरि गेल अछि । ओतए जे उवरि (बाँचि) सकल से पड़ाए गेल।। 5 ।।

(जयकरी छन्द)

निशिपा खाँ भागि गेल।
राएक राउते खेदि लेल।
सएक खेदल सहस पराए।
सङ्गहि भम सङ्ग हराए।। 6।।
आगाँ घाटि पाछाँ घाअ।
छिपि छिपल जाइते जाअ।।
भलाहु मानुस सञ्चे नही।
आगिक तातल अखन मही।। 7।।
गमन करथि गोहन जानि।
डेग प्रति माङ्गथि पानि।।
पान धके धाम हारथि।
सकतिउ रोषल लड़ए न पारथि।। 8।।
जतहु ततहु अबट धरथि।
दांते आंगुलि दैन्य करथि।।
सङ्कट कान्द सबहि अति।
प्रानक सङ्का मानक खति।। 9।।

भलेउ मन्देउ जे जन बूझ।
पलाइते बाट ताहु न सूझ॥
आहवे घाइले पृथ्वी भरलि।
रामक रीति सूरे धरलि॥ 10 ॥
वाटीक हरिण भङ्गक हुण्डार।
हाथक सुखे सबे मार॥
तात भेल अइसन चरन।
सबे गेल सुरुतानक सरन॥ 11॥
एठमा आनी अधिक आगरि।
सूतलि विरनी ददाए जागलि॥
पछिल जूझ खाड़-खीर।
सञो सञो जूझओ वीर॥ 12॥
एठमा सञो सुरुतानी ढोआ।
लोहाक घाँटी वज्रक मोआ॥ 13॥

छायाः-

निशिपा खानः भग्नो जातः।
राज्ञो राजपुत्रैः खेदयित्वा लातः।।
शतस्य खेदिताः सहस्रं पलायिताः।।
सङ्ग एव भ्रमिताः सङ्ग एव हताः।। 6।।
अग्रे घाटी, पश्चाद् घातः।
क्षिप्त्वा क्षिप्त्वा यन्तो यान्ति।।
भद्रोऽपि मनुष्यः शान्तो नहि।
अग्निना तप्ता एतत्क्षणे मही।। 7।।
गमनं कुर्वन्ति गोधनं (स्वदलं) ज्ञात्वा।
पदं प्रति याचन्ते पानीयम्।।

प्राणान् धरन्तो धाम हारयन्ति।
शक्त्यापि रुष्टाः योद्धुं न पारयन्ति।। 8।।
यत्रापि तत्रापि अर्वत्म धरन्ति।
दन्तैः अङ्गुलीः (धृत्वा) दैन्यं कुर्वन्ति।।
सङ्कटे क्रन्दन्ति सर्वेऽप्यति।
प्राणानां सङ्का मानस्य क्षतिः।। 9।।
भद्रं मन्दं वा येन जनेन बुद्ध्यते।
पलायितुं वर्त्म तेनापि न दृश्यते।।
आहवे घातितैः पृथ्वी भरिता।
रामस्य रीतिः शूरै र्धृता।। 10।।
वाटीस्थं हरिणं, भङ्गस्थं हुण्डारम्।
हस्तसुखेन सर्वे मारयन्ति।।
तप्तीभूता एवंविधाः चरणे।
सर्वे गताः सुरत्राणस्य शरणे।। 11।।
अत्रस्था अनीका अधिका आगारा।
ननु सुप्ता वरटा क्रुद्धा जागृता।।
पश्चात्तनं युद्धं खाण्ड-क्षीरम्।
संगे संगे युद्ध्यन्तु वीराः।। 12।।
एतत्स्थानतः सुरत्राणीयम् आक्रमणम्।
लौहस्य घण्टिका वज्रस्य मुद्गराः।। 13।।

हिन्दी- निशिबुद्दीन खाँ भाग गया। राजा (शिवसिंह) के सैनिक राजपूत खदेड़ने लगे। जो यवन साथ-साथ घूमते थे, वे साथ ही भूल-भटक गये।। 6।।

आगे घाटी (नदी पार होने का अति गहरा स्थान) थी तो पीछे से आक्रमण हो रहा था। लोग छिप छिप कर भागते जा रहे थे। भले आदमी भी चैन से नहीं रहते थे। अभी आग से तप्त पृथ्वी हो गयी है।। 7।।

विदा होते थे यह जानकर कि आगे हमारा दल (गोहन) होगा, पर कदम-कदम पर पानी मांगते थे। प्राण की रक्षा कर घर (जगह) हारते थे और शक्ति रहने पर भी लड़ नहीं पा रहे थे।। 8।।

जहाँ तहाँ बेरास्ता चलते थे। (उपाय में असमर्थ रहने के कारण) दाँतों तले अंगुली दबाकर पछताते थे। संकट में पड़कर सभी जोर से रोते थे । वहाँ प्राण जाने की शंका थी और मान-मर्दन होता था।। 9।।

भला या बुरा जो लोग समझते थे, उन्हें भी भागने का राह नहीं सूझता था। युद्ध में घायल हुए वीरों से पृथ्वी भरी थी जो रामचन्द्र के युद्ध के रूप को पूर्णतः धारण करती थी (राम के स्थान में नरक पाठ माना जा सकता है, तब अर्थ होगा- वह नरक के रूप को पूर्णतः धारण करती थी)।। 10।।

बगीचे के हरिन एवं भाँग के वन में छिपे भेड़िये को लोग आसानी से मारते थे (उसी प्रकार छिपे तुर्कों को लोग ढूढ़ कर मारने लगे)। उनके पाँव ऐसे तप्त हो गए कि वे भागकर सुलतान के शरण में चले गये।। 11।।

यहाँ सुलतान के दरबार में सेना बहुत गुणों से भरी थी। हार की बात सुनते ही वह बौखला उठी जैसे सोयी हुई विरनी चोट खाकर सनसना कर जाग गयी हो। पीछे का युद्ध खाँड़ युक्त खीर था जिसे खाकर वीरता को भूल गये, किन्तु अब की बार साथ-साथ चलकर वीर लड़े।। 12।।

यहाँ से सुलतानी सेना कूच करे और लोहे की घंटी तथा वज्र के दण्ड लेते जावे।। 13।।

मैथिली- निशिपा (नसीबा) खाँ गेल, तकरा राए शिवसिंहक राउत (राजपूत) सब खेहारि देलक। एक सए राजपूतक खेहारने हजारक हजार शत्रु पड़ाए लागल। ओ यवन सब संगहि घुमैत रहल आ संगहि हराइयो गेल (विछुड़ि गेल)।। 6 ।।

आगू मे घाटी (दू भिण्डक बीचक गहींर स्थान) छल त पाछाँ सँ आक्रमण छल। तेँ नुकाए-नुकाए जाइत गेल। नीको लोक चैन सँ नहि रहैत छल। एखन पृथ्वी आगिसँ तप्त अछि।। 7 ।।

विदा त होइ छल आगू अपन दलकेँ जानि कए, मुदा डेगे-डेगे पानि मङैत छल। प्राणकेँ धए कए (बचाए) घरो (शिबिरो) हारि जाइत छल। शक्ति रहलो पर तामसें लड़ि नहि पबैत छथि।। 8 ।।

जतए-ततए विनु वाटहि चलए लगैत अछि। उपायमे अक्षम भेला सँ दाँत तर मे अंगुरी दबाए दीनता प्रगट करैत अछि। संकट मे सब क्यो अतिशय कनैत अछि। एतए प्राण जएबाक शंका एवं मानक क्षति छैक।। 9 ।।

नीक-बेजाए जे लोक बुझैत छल तकरो पड़ाइत बाट नहि सुझैत छलैक। युद्धमे घाइल सैनिक सँ ओतएक पृथ्वी भरि गेल छल। शूर सबहक द्वारा रामक जेकाँ युद्ध कौशल रीति धारण कएल गेल छल।। 10 ।।

वाड़ी मे नुकाएल हरिन ओ भाङक वनमे नुकाएल हुड़ार कें सैनिक सब हाथहि सँ पकड़ि मारैत छल। एहन तप्त (धिपल) भेल सब पएरहि सुलतानक शरणमे गेल।। 11 ।।

एहिठाम सुलतानक दरबार मे सेना सब बहुत गुनक आगर छल । से हारिक समाचार सुनि ओ सब तेना दौड़ल जेना सूतल विढ़नी ढेपा लगला पर धधाए=सनसनाए जागि गेल हो। पछिला (पूर्वक) युद्ध खाँड़ युक्त खीर छल जे खाए अपन शूरता गमओलक, मुदा आब उत्साह सँ (चतुरता सँ) वीर सब युद्ध करओ।। 12 ।।

एहि ठामसँ सुलतानक सेनाक आक्रमण होअओ (अथवा सुलतानी ढौआ=टाका लए जाओ) ओ सब लोहाक घंटी ओ वज्रक मुङरी लए जाओ।। 13 ।।

(रड्डा छन्द)

चमकि उट्ठिअ एम सुरुतान।।
सबे लग्गिअउ गोहारि, चारु सेन चतुरङ्ग सज्जिअ।
सेत छत्त उग्गमिअ, पाअ-भरहि महिचक्क भज्जिअ।।
अक्कामिक आबन्त हुअ, पक्खर खग्ग घनक्क।
णं समुद्दजल उच्छलिअ, मूल सुमेरु मलक्क।। 14।।

छन्दः (तोटक)

सुरुतान सलग्गिअ सज्ज भई।
हअ पक्खर रट्टर खग्ग लई।।

सर सल्ल सनाह चमक्क तहा॥
घन छड्डिअ ताराए जोति जहा॥ 15॥
धअ चामर चारु पताक लसे।
रण कानन पल्लव फुल्ल हसे॥
बहु पाइक-चक्क चमक्क तही।
पलयन्तक नह्विअ दोल मही॥ 16॥
करि उप्पर उट्ठिअ रेनु भरे।
जनि पव्वअ झप्पिअ वारिधरे॥
दिसि चारिहु चप्परि दन्तिघला।
जनि बेढ़िअ मेहे ससाङ्क-कला॥ 17॥
सए-कोटि लकाई दिट्ठि भमे।
जिह लक्ख पसारिअ काइ जमे॥ 18॥

(षट्पद छन्द)

लाखे लकाई धमिअ, कोटि करवाल उपलि गउ।
एक्के बेरि एकइट्ठि, बिज्जु उज्जोर भान भउ॥
ढोढल तबल निसान, मेह घरहनिअ जुगन्तह॥
कत दुर सेना पसरु, दिट्ठि नहि पाबिअ अन्तह॥
सुरुतान कोह जनि अनल बम, सए जनि उग्गिअ सहसकर।
दिगपाल तरस्सिअ दसहु दिस, इन्द चन्द गोविन्द डर॥ 19॥

(गद्य)

तेतुली वेला सुरुतानी ढोआ करे अवसर महाराजाधिराज श्रीमच्छिवसिंहदेवहि करे पराक्रमपरीक्षा-कौतूहली देखए के सुरवर्ग विमान करो वेग बाढ़, जनि ऐरावत चढ़ि अन्तरिक्ष इन्द्र ठाढ़, महामांस करे लोभे भूतगण क्रीड़, सूरन्हि करे यात्रानुरोधे सूर्यमण्डल छीड़, खेचर हर्ष, सुरपुर प्रकर्ष, मेनका रम्भा तिलोत्तमा घृताची

उर्वसी-प्रभृति विद्याधरिहिं करु शृंगार, जनि मर्त्तलोक प्रत्यासन्न-संहार !।। 20।।

छाया-

चकित उत्थित एवं सुरत्राणः।।
सर्वे लग्ना रक्षायां, चलितं सैन्यं चतुरङ्गं सज्जितम्।
श्वेतच्छत्राणि उद्गतानि, पादभरैः महिचक्रं भग्नम्।।
आकस्मिकम् आगमनभूत् प्रक्षरास्त्र-खड्गा घनघनायिताः।
ननु समुद्रजलम् उच्छलितं मूले सुमेरुः भग्नः।। 14।।
सुरत्राणः संलग्नः सज्जः अभूत्।
हय-प्रस्तर-मुद्गर-खड्गान् नीत्वा।।
शर-शल्य-सन्नाहानां चकास्तिः तथा।
घनै र्मुक्तानि ताराणां ज्योतींषि यथा।। 15।।
ध्वज-चामर-चारुपताका लसन्ति।
रण-कानने पल्लवाः फुल्लानि च हसन्ति।।
बहुपदातिचक्रं चकास्ति तत्रैव।
प्रलयान्तवद् नर्दिता दोलिता मही।। 16।।
करिणःउपरि उत्कीर्णा रेणुः भरति।
यथा पर्वते झम्पन्ति वारिधराः।।
दिक्षु चतुर्ष्वपि आच्छन्ना दन्तिघटा।
यथा वेष्टिता मेघैः शशाङ्ककला।। 17।।
कोटिशतं लकाईशस्त्रं दृष्टिभ्रमं जनयन्ति।
जिह्वानां लक्षं प्रसारितं किम् यमेन।। 18।।
लक्षं लकाई-वाद्यानि ध्मातानि, कोटिः करबाला उपरि गताः।
एकवारमेव एकत्रितेषु तेषु, विद्युत उद्योतस्य भानम् अभूत्।।
डिण्डिम-तबल-निशानवाद्यानि, मेघा इव घर्घरायितानि युगान्तस्य।
कियद् दूरं सेना प्रसृता, दृष्टिः नहि प्राप्नोत् अन्तस्य।

सुरत्राणस्य क्रोधः तथा अनलं वमति, शतं यथा उदिताः सहस्रकराः।
दिक्पालाः त्रस्ताः दशसु अपि दिक्षु, इन्द्र-चन्द्र-गोविन्दाः भीताः।। 19 ।।

तृतीयवेलायां सुरत्राणीयाक्रमणावसरे महाराजाधिराज श्रीमच्छिवसिंह देवानां पराक्रम-परीक्षा-कौतूहलं द्रुष्टुं सुरवर्गः विमानवेगं वृद्धम् (अकरोत्) यथा ऐरावतम् आरुह्य अन्तरिक्षे इद्रः स्थितः। महामांसस्य लोभे भूतगणः क्रीडति, शूराणां यात्रानुरोधेन सूर्यमण्डलं क्षीणं, खेचराः हृष्यन्ति, सुरपुरः प्रकृष्यति, मेनका-रम्भा-तिलोत्तमा-घृताची-उर्वशीप्रभृति विद्याधर्यः कुर्वन्ति शृंगारम्, यथा मर्त्यलोकः प्रत्यासन्नसंहारः।। 20।।

हिन्दी- इस तरह सुलतान चौंक उठा। सब रक्षा में लग गये। सज्जित चतुरंगी सेना चल पड़ी। श्वेत छत्र (उजल छाते) दिखाई पड़ने लगे। पैरों के भार से पृथ्वीचक्र भग्न होने लगा। सेना का रणक्षेत्र में आकस्मिक आगमन हुआ। पक्खर (एक प्रक्षेपास्त्र), खड्ग आदि झलकने लगे, जैसे समुद्र का जल उछल पड़ा हो और सुमेरु पर्वत का जड़ भड़क उठा हो।। 14।।

सुलतान की सेना जाकर घोड़ा, पक्खर (प्रक्षेपास्त्र), रट्ठर (रडार) एवं खड्ग लेकर सज्जित हो गयी। बाण, बर्छे, सन्नाह (कवच) ऐसे चमक रहे थे, जैसे मेघों ने (हटकर) ताराओं की ज्योति को छोड़ दिया हो।। 15।।

ध्वजा, चँवर और पताके ऐसे सुन्दर लग रहे थे, जैसे रणरूपी वनमे पल्लव एवं फूल हँस रहे हों। बहुत सी पैदल सैन्य की टुकड़ियाँ चमकती थीं और प्रलयकाल के अन्त के समान शब्द करती हुई पृथ्वी डोल रही थी।। 16 ।।

हाथी के ऊपर धूल उड़कर भरते हैं, जैसे पर्वत पर मेघ बरस रहा हो । चारों तरफ से हाथियों के झुण्ड आक्रमण कर रहे हैं जैसे मेघों ने चन्द्रमा की कला को घेर लिया हो।। 17।।

सैकड़ों करोड़ लकाई शस्त्र या रणवाद्य (जो लम्बे लाल रंग के थे) दृष्टिभ्रम को पैदा कर रहे हैं कि क्या यमराज ने लाखों जीभ पसार रखा है ।। 18।।

लाखों लकाई वाद्य फूंककर बजाये गये, करोड़ों तलवार ऊपर उठाये गये और एक ही बार सब इकट्ठे हो गये, बिजली की चमक जैसा उजाला मालूम पड़ गया। ढोल, तबला और निसान (नगाड़े) के शब्दों से लगता है कि युग के अन्त में प्रलयकालीन मेघ गरज रहा हो। सेना कितने दूर में पसरी (फैली) हैं, दृष्टि इसका अन्त नहीं पा रही है। सुलतान क्रोध में वैसे आग उगल रहा है, जैसे सैकड़ों

सूर्य उग गये हों। दसों दिशाओं के दिक्पाल भयभीत हो रहे हैं। वहाँ इन्द्र, चद्र और गोविन्द भी डर गये हैं।। 19।।

दिन के तीसरे पहर में सुलातानी सेना के प्रस्थान (आक्रमण) के अवसर पर महाराजाधिराज श्रीमान् शिवसिंह के पराक्रम परीक्षण की तमाशा देखने के लिए देवगणों ने अपने विमानों के वेग को बढ़ा लिया हो, जैसे ऐरावत हाथी पर चढ़कर आकाश में देवराज इन्द्र खड़े हैं, नरमांस के लोभ से भूतगण खेल रहे हैं, वीरों की यात्रा के कारण (गर्दा उड़ने से) सूर्यमण्डल क्षीण हो रहा है, आकाश में चलने वाले (ग्रह या देव) प्रसन्न हैं। देवलोक उत्कृष्ट हो रहा है (क्योंकि युद्ध में मरे शूर वहीं पहुँचेगे)। मेनका, रम्भा, घृताची तिलोत्तमा उर्वशी आदि अप्सराएँ शृंगार कर रही हैं। (क्योंकि उत्कृष्ट राजा मर कर स्वर्ग आएंगे) और लगता है कि मनुष्यलोक का सर्वनाश निकट है।। 20।।

मैथिली- एहि तरहें सुलतान चौंकि गेल (वा क्रोध सँ चमकि उठल)। सब हुनका गोहराबए लागल (जे अपने आश्वस्त रहल जाए, आब सेना पाछू नहि हटत)। सेना चलल, चतुरंग (रथ, हाथी, घोड़ा ओ पैदल –ई चारू प्रकारक) सेना सज्जित भेल। उजरा छत्र (छाता) फहराए लागल । सेनाक पएरक भारसँ पृथ्वीमण्डल भंग होबए (मचमचाए) लागल। आक्रामक (आक्रमणकारी सेना) आबि गेल, पक्खर (घोड़ाक कवच) ओ खड्ग झलकए लागल, जेना समुद्रक जल उछलि पड़ल हो आ सुमेरु पर्वतक मूल भहरि रहल हो।। 14 ।।

सुलतान संलग्न भए (युद्धक हेतु) सज्जित भेल। ओ कवच युक्त घोड़ा, वर्च्छा आ खड्ग लेल। बाण, बर्च्छा ओ कवच तेना चमकैत छल जेना मेघ सँ छोड़ल (मेघक हटला पर) ताराक ज्योति रहए।। 15 ।।

ध्वजा चामर ओ पताका एहन शोभित छल जेना युद्धरूपी वन मे पल्लव एवं फूल हँसि रहल हो। बहुतो पैदल सेनाक दल सभ ओतए चमकि रहल छल आ प्रलयक अन्तक घरघराहटि सँ युक्त पृथ्वी डोलि रहल छल।। 16 ।।

हाथीक ऊपर उड़ल घूरा भरि रहल छल जेना पहाड़ मेघसँ झँपाए गेल हो। चारू दिस हाथीक झुण्ड जबर्दस्ती सेनाक दल मे हूलि रहल छल जेना मेघ चन्द्रकला केँ घेरि लेने छल।। 17 ।।

सए कड़ोर (लम्बा लाल लाल) लकाई बाजा दृष्टि भ्रम कए रहल छल, जेना यमराज लाख टा जीह पसारने छथि की ?।। 18 ।।

लाखो लकाई (धुतहू बाजा) फूकि बजाओल गेल। कोड़ोरो तरुआरि ऊपर उठाओल गेल। एक्के बेर सब अस्त्र एकट्ठा भेल कि बिजलोका जकाँ उज्जर भए गेल। ढ़ोल तबला नगाड़ा रूपी 'युगक अन्त कालीन मेघ' घरघराए लागल। कतेक दूरमे सेना पसरल से दृष्टि तकर अन्त नहि पाबि सकल। सुलतानक क्रोध जेना आगिक वमन कए रहल हो, जेना सैकड़ो सूर्य उगि गेल हो। दसो दिशाक दिक्पाल डेराए गेलाह आ सूर्य (इन), चन्द्र आ गोविन्द (विष्णु) सेहो डेराए गेलाह।। 19 ।।

दिनक तेसर पहरमे सुल्तानक आक्रमणक अवसर पर महाराजाधिराज श्रीमान् शिवसिंहक पराक्रम-परीक्षाक तमाशा देखबाक लेल देवगण अपन विमानक वेगकें बढ़ा देल, भरिसक ऐरावत हाथी पर चढ़ि इन्द्र अन्तरिक्ष (आकाश) मे ठाढ़ छथि। महामांसक लोभ सँ भूत सब खेलाए रहल अछि, शूर सभक यात्राक अनुरोध सँ सूर्यमण्डल क्षीण (मन्द) भए गेल अछि। आकाशचारी देव (विद्याधार, अप्सरा आदि) आनन्दित छथि, देवताक पुर (स्वर्ग) उन्नति कए रहल अछि (किएक तँ युद्ध मे मुइल उत्तम वीर ओतहि जएताह। मेनका, रम्भा, तिलोत्तमा, घृताची, उर्वशी आदि विद्याधरी (देवताक अप्सरा) सब सिङार-पटार करए लागल (जे उत्तम राजा सब युद्धमे मारल गेला पर स्वर्ग पहुँचताह आ हमरा सब हुनक सेवा सत्कार मे लागब), जेना मृत्युभुवनक (भूलोकक) संहार (नाश) निकट भए गेल हो।। 20।।

(रड्डा छन्द)

ताम पेक्खिअ विवण्ण गौडेस।।
राअ भनइ शिवससिंघ, वेवि सत्तु धुअ जिनिए पाबिअ।
अह सूरत्तन पान आहव हुतवह कटक धाबिअ।।
तं विहि बाँटी सम किअउ, लाइ तुला धरि ताम।
एहु सूरत्तण अह्म दिअ, कटक दिअउ सुरुतान।। 21।।

(जयकरी छन्द)

आज्ञा भेल पइसि मारह, थोल बहुत जनु विचारह॥
बेरि नहि बिमरिस को, अधिक झखइतें आपधि हो॥ 22॥
ता राउत्तन्हि करबा कोटि। भूमी केवल वासना छोटि॥ 22॥

(गद्य)

जसके लोभे विनु क्षोभे परबल पवेस करिअ, जनि बड़ा गोकुल सद्दूल बनिअ॥ 24॥

(छन्द छप्पए)

तं सङ्कर जस लहिअ, पठम सुरजू सेनापति।
सिंघउ सिंह समान तोरि तरवारि विवहि गति॥
रुन्धइ अरि रयमल्ल हेरि हस्सउ रण रुट्ठउ।
नाइँ पञ्च पाण्डवह सेन्न कौरवह पइट्ठउ॥
संसार सुरुकि राउत्तपति, भाऊ राउत भीम सम।
परहार करथि जा वीर के, ता के निच्चउ कुपुत जम॥ 25॥

छाया–
तं प्रेक्ष्य विवर्णो गौडेशः॥
राजा भणति शिवसिंहः, उभय शत्रुः ध्रुवं जेतुं पार्यते।
अथ शूरत्वेन प्राणैः, आहव–हुतवहे कटको धावति॥
तद् विधिना बण्टयित्वा समीकृतं, यथा तुलायां धृत्वा तत्।
एतयोः शूरत्वं मह्यं दत्तं, कटको दत्तः सुरत्राणाय॥ 21॥
आज्ञाऽभूत् प्रविश्य मारय, स्तोकं बहु मा विचारय॥
वेलायां नहि विमृशेत् कोऽपि, अधिकं झषितेन आपद् भवति॥ 22॥
ततो राजपुत्राणां दलस्य कोटिः। भूम्याः केवला वासना क्षुद्रा॥ 23॥
यशसः लोभे, विना क्षोभं परबले प्रवेशः कृतः,
यथा बृहति गोकुले शार्दूलो गतः॥ 24॥

तेन संगरे यशो लब्धवान् प्रथमं सूर्यः सेनापतिः।
सिंहः सिंहसमानः तोलयित्वा तरवारिं विविधगत्या।।
रुणद्धि रायमल्लः दृष्ट्वा हृष्यति रणे रुष्टोऽपि।
यथा पञ्चपाण्डवानां सैन्यं कौरवेषु प्रविष्टम्।।
संसारे सुरुकि-राजपुत्रपतिः, भाऊ राउतो भीम-समः।
प्रहारं करोति येषु वीरेषु, तेषां निश्चयं कुपितो यमः।। 25।।

हिन्दी- उस तरह देखकर गौड़श (गौड़ देश का राजा यवनपक्ष का) विवर्ण (पीला) हो गया। राजा शिवसिंह ने कहा कि दोनों शत्रुओं को हम निश्चय जीत लेंगे। वीरतासे प्राण अर्पित कर युद्ध रूपी आग में सेना दौड़ गई। विधाता ने उसको तराजू पर रखकर दोनों दलों में बराबर बाँट दिया। इनमें शूरता तो हमें और सैन्यदल सुलतान को दिया।। 21।।

राजा शिवसिंह की आज्ञा हुई कि पैठकर मारो। थोड़े या ज्यादे का विचार मत करो। विचारविमर्श का अवसर नहीं है। ज्यादे उधेड़बुन करने से विपत्ति आ जाती है।। 22।।

इसलिये करोड़ों राजपूतलोगों का करमान (विशाल समूह) लग गया । केवल भूमि अधिकृत करने हेतु, उनकी छोटी वासना है।। 23।।

यश के लोभ से विना क्षोभ के ही शत्रु के दल में प्रवेश किया। जैसे बड़े गोशाला में बाघ बन गया हो।। 24।।

उस संग्राम में प्रथम यश सुरजू सेनापति ने प्राप्त किया। सिंह के समान 'सिंघउ' वीर विविध तरह से तलवार चला रहे थे। रायमल्ल शत्रु को रोक रहे थे जो शत्रु को देखकर क्षणभर हर्षित तथा क्षणमे रुष्ट होते थे जैसे पाँचों पाण्डवों की सेना कौरवदल में प्रवेश कर गयी हो।

सुरुकिवंशीय राजपूतों में प्रधान 'संसार' राउत और भाऊ राउत भीमके समान सर्वोपरि वीर हैं, वे जिन वीरों पर प्रहार करते हैं उनपर निश्चय यमराज कुपित होता है।। 25।।

मैथिली- से देखि गौडेश (बंगालक राजा जे सुलतानक पक्षमे छल) विवर्ण (फीका मुँहवला) भए गेल। राजा शिवसिंह कहैत छथि जे दुनू शत्रु (सुलतान आ गौडेश) कें निश्चित रूपें जीति सकब। आब शूरता भरल प्राण सँ युद्धरूपी आगि मे सैन्यदल दौड़ि गेल। तें विधाता ओकरा तराजू पर

धए बाँटिकए बरावर कए देलनि। एहि मे शूरता हमरा आ सैन्यदल सुलतान कें देलनि।। 21 ।।

राजा शिवसिंहक आज्ञा भेल जे शत्रुदलमे पैसि कए ओकरा मारैत जाह, थोड़ वा बहुतक विचार नहि करह। विचार विमर्श (तारतम) करबाक बेर (अवसर) नहि अछि, बेसी झँखला सँ (अपन दीनता=कमीक चिन्ता सँ) विपत्ति आबि जाइत छैक।। 22 ।।

तेँ कड़ोरो राउत=राजपूत सभक करमान (विशाल समूह) लागल छल। केवल भूमि अधिकृत करबाक एक छोट वासना=भावना छलनि।। 23 ।।

ओ सब यशक लोभें, विनु क्षोभेँ (दुःखसँ) शत्रुक सैन्यदलमे प्रवेश कएल जेना बड़ पैघ गोशालामे बाध बनल हो।। 24 ।।

ओहि संग्राममे पहिल यश सेनापति सुरजू पओलनि। सिंहक समान सिंघउ वीर विविध तरहें तरुआरि भाँजि रहल छलाह। रयमल्ल शत्रुकेँ रोकि रहल अछि जे शत्रुकें देखि खन हर्षित आ खन रुष्ट होइत अछि जेना पाँचो पाण्डवक सेना कौरवक दलमे पैसि गेल हो।

सुरुकि वंशीय राजपूतमे प्रधान संसार राउत ओ भाऊ राउत भीमक समान छल। ओ जाहि वीर पर प्रहार करैत छल, निश्चय तनिका ऊपर यमराज कुपित भए जाइत छलाह।। 25 ।।

(रड्डा छन्द)

खान विक्कम मेरु चउदन्त।।
चापि तुरुअ, तरवारि, तोरि ओहु रन इसर धाइअ।
वेवि करिअ मिलि मारि, अरि निवारि जस विमल पाइअ।।
ईसर चप्परि खग्ग धरि, सङ्गर कर पहुकाज।
सिरि विक्कम चप्परइ रन, खग्गह सेबइ राज।। 26।।
तब्बे लगिअ समर सोमनाथ।।
जिबाइ सोअर तासु, तेन्ने मारि करवाले करिअउ।
धरम सिंह के तनय, सत्तु टेकि सङ्गाम धरिअउ।।

सङ्गर सेवइ सत्तमय, राज नगाढ़ि मसीम।
तीनि सहोअर मारि कर, णं कौरव बल भीम।। 27।।
कोपि लग्गिअ ताम उजञोन।।
सरब सिंघ बउराअ, आस बान्हि तह कुमर लग्गिअ।
सुगिनी कुल सुपसिद्ध, जासु कित्ति दहदीस जग्गिअ।।
संग दास हरिपाल तहँ, वज्ज तुल्ल जसु तीर।
पच्छिम-वए पव्वीन-मति, सुअलीवंस पवीर।। 28।।

छन्दः (तोटक)

रण खेमराज-नन्द सुजानु।
अरि तिमिर भानु सम इसर मानु।।
हरदत्त तनय हेरम्ब नाह।
रण भीसन भीषू चोरगाह।। 29।।
धनुवेअ-विअक्खन पुन्नमल्ल।
जसु एक बाने एक्कक्क सल्ल।
गोपाल मलिक चन्देल वंस।
रण सिन्धु सरोरुह राज हंस।। 30।।
अक्खउरी इसर अधरम हीन।
सङ्गाम कज्ज अरिराए जीन।।
जइसिंघ तनय हरिहर सुजान।
अग्गनिउ खग्गे रन खग्ग खान।। 31।।
पत्ताप-तनय जसराज देव।
रण तासु तुला नहि लहइ केव।।
तह पल्लिवार धोरनि गरिट्ठ।
सरजाले मारि कर समरधिट्ठ।। 32।।

छाया-

खानो विक्रमो मेलयति चतुर्दन्तम्।।

आनम्य तुरगं, तरवारिं तोलयित्वा तस्मिन् रणे ईश्वरो धावितः।
द्वावपि करोति सम्मिल्य मारं, अरिं निवार्य यशो विमलं प्राप्नोत्।।
ईश्वरः तत्परतया खड्गं धृत्वा, सङ्गरे करोति प्रभुकार्यम्।
श्रीविक्रमः तत्परो रणे, खड्गहस्तः सेवते राजानम्।। 26।।
तावद् लग्नः समरे सोमनाथः।।
जीवकःसोदरः तस्य, स एव मारं करवालैः अकरोत्।
धर्मसिंहस्य पुत्रः शत्रुं संस्तभ्य संग्रामम् अधरत्।।
सङ्गरं सेवते सत्त्वमयः, राजनगारिः मसीमः।
त्रयः सहोदराः मारं कुर्वन्ति ननु कौरव-बले भीमः।। 27
कुपितो लग्नस्तावद् उज्जैनः।।
सर्वसिंहःवसुराजः आशां बद्ध्वा तत्र कुमारो लग्नः।
सुगिनी कुले सुप्रसिद्धः, यस्य कीर्तिः दशदिक्षु जागरिता।।
संगे दासो हरिपालस्तत्र, वज्रतुल्यो यस्य बाणः।
पश्चिमवयाः, प्रवीणमतिः, सुअली-वंश प्रवीरः।। 28।।
रणे क्षेमराज-नन्दनः सुज्ञानः। अरितिमिरे भानुसम ईश्वरो मन्यताम्।।
हरदत्त-तनयो हेरम्बनाथः। रणे भीषणो भीषुकः चामरग्राहः।। 29।।
धनुर्वेद विचक्षणः पुण्यमल्लः। यस्यैको बाणः एकैकः शल्यः।।
गोपाल-मलिकः चन्देल-वंश्यः। रणसिन्धु-सरोरुहेषु राजहंसः।। 30।।
आक्षपटलिक ईश्वरः अधर्महीनः। संग्रामकार्ये अरिराजं जयति।।
जयसिंह-तनयः हरिहरः सुज्ञानः। अग्रणीः खड्गै रणे खड्गखानः।। 31 ।।
प्रतापतनयः जसराजदेवः। रणे तस्य तुलां न लभते कोऽपि।।
तत्र पल्लिवार-धोरणी-गरिष्ठः। शरजालेन मारं करोति समरधृष्टः।। 32 ।।

हिन्दी- विक्रम खाँ हाथियों को मिला रहे हैं। घोड़ों पर जीन कस कर तलवार को सन्तुलित करते हुए वीर इसर रणभूमि में शीघ्र दौड़ पड़े। दोनों (विक्रम और इसर) झटपट तलवार धारण कर युद्ध में प्रभु का काम कर रहे हैं, जबकि श्रीविक्रम रण में फुर्ती से पहुंच कर खड्ग हाथ में लेकर राजा की सेवा (रक्षा)

कर रहे हैं।। 26।।

तब सोमनाथ युद्ध में लग गये। उनके सहोदर भाइ जिबाइ ने तलवार से युद्ध किया। धर्मसिंह के इन पुत्रों ने शत्रु को थामकर संग्राम पकड़ लिया। सत्त्वमय (बलशाली) नगारि (राजसेवक वीर) मसीम युद्ध में राजा के पास रहकर सेवा (रक्षा) करने लगे। ये तीनों सहोदर भ्राता युद्ध क्षेत्र में मार करने लगे जैसे कौरव की सेना में भीम पहुँचा हो।। 27।।

तबतक कुपित होकर उज्जैन वंश के राजपूत वहाँ युद्ध करने लगे। उनमें सर्वसिंह उन्मत्त (बौराह) होकर लड़ने लगे। विजय की आशा बान्ध कर वहाँ कुमर भिड़ गया जो सुगिनीकुल में प्रसिद्ध था और जिसकी कीर्ति दसों दिशाओं में फैल चुकी थी। वहाँ उनके साथ 'हरिपाल दास' थे, जिनके तीर वज्रतुल्य होते थे, जो ढलती अवस्था (पचास वर्ष से ऊपर) में आ गये थे, निपुण बुद्धिवाले थे और सुअलीवंश के उत्तम वीर थे।। 28।।

क्षेमराज के पुत्र सुजान चल पड़े। शत्रु रूपी अन्धकार के लिए सूर्य के समान इस को मानिए। हरदत्त के पुत्र हेरम्बनाथ हैं। चँवर डुलाने वाला राजसेवक भीषू रणमें भयानक है। धनुर्वेद में पंडित पुण्यमल्ल हैं, जिनके एक-एक बाण एक-एक भाले के समान हैं। चन्देल राजपूत वंश के गोपाल मलिक हैं, जो रण रूपी नदी के सेना रूपी कमलों में हंस के समान हैं।। 30।।

अखौरी वंश के इसर (ईश्वर) नामक वीर निष्पाप हैं और युद्ध कार्य में शत्रु राजा को जीत लेते हैं। जयसिंह के पुत्र सुन्दर बुद्धिवाले हरिहर हैं। खड्ग खाँ तलवार लेकर युद्ध में अग्रणी हो रहे हैं।। 31।।

प्रताप के पुत्र जसराज देव हैं, रणमे जिनकी तुलना को कोई नहीं पा रहा है। वहाँ पल्लिवार (पालीमूलग्राम वाले) वंश की श्रेणी में सर्वोत्कृष्ट वीर आ पहुँचे और बाणों के जाल से समर में धृष्टतापूर्वक युद्ध करने लगे।। 32 ।।

मैथिली- विक्रम खान हाथी हुलाए रहलाह अछि। घोड़ाकेँ कसि (जीन लगाम आदि सँ तैयार कए) तरुआरि उठाए ओहि युद्धभूमिमे इसर (एक वीर) दौड़लाह। दुनू वीर (विक्रम आ इसर) मीलि शत्रुसँ मारि कएलनि, शत्रुकेँ बैलाए निर्मल यश पओलनि। ईसर लपकि कए खड्ग धए युद्धमे प्रभुक (राजा शिवसिंहक) काज करैत छथि। श्रीविक्रम रणमे तत्पर भए खड्ग सँ राजाक सेवा करैत छथि।। 26 ।।

तखनहिं सोमनाथ युद्धमे लागल छलाह। हिनक सहोदर भाए जिवाइ तरुआरि सँ मारि कएलनि। धरमसिंहक बेटा सब शत्रुकेँ रोकि संग्राम धएलनि। बलशाली राजनगाढ़ि (राजाक एहन महायोद्धा जे पाछू नहि रहए, लगारी) 'मसीम' युद्ध कए रहल छथि। एहि तरहें तीनू सहोदर (सोमनाथ, जिवाई ओ मसीम) मारि कए रहलाह अछि जेना कौरवक सेना मे भीम हो।। 27 ।।

ताधरि तमसाए उजौन राजपूत (युद्धमे) लागि गेलाह। सर्वसिंह उन्मत्त (बौराह) भए युद्धे मे लागि गेलाह। ओतए विजयक आशा बन्हि कए कुमर युद्धमे लागि गेलाह जे सुगिनी वंशमे प्रसिद्ध छलाह जनिक कीर्ति दहो दिस जागि रहल अछि। तकर संगहि ओतए हरिपाल दास छलाह जनिक बाण वज्रक समान छल। ओ प्रौढ़ (पश्चिम=अगिला अवस्थाक) प्रवीणमतिवाला सुअली वंशक प्रवीर थिकाह।। 28 ।।

खेमराजक पुत्र रणमे प्रख्यात (सुज्ञात) छथि। शत्रुरूपी अन्धकारक लेल सूर्यक समान इसर कें मानू। हरदत्तक पुत्र हेरम्बनाथ ओ चोरगाह (चामर ग्रहण करए वाला राजसेवक) भीखू युद्धमे भयानक लगैत छलाह।। 29 ।।

धनुर्वेदक उत्तम ज्ञाता पूर्णमल्ल छथि जनिक एक बाण एक एक भालाक तुल्य छन्हि। चन्देल वंशक गोपाल मलिक छथि जे रण रूपी नदीक सेनारूपी कमल दलक लेल राजहंस थिकाह।। 30 ।।

पापरहित इसर अखौरी युद्ध कौशल मे शत्रुदलक राजा (प्रधान) कें जीति लेल। जयसिंहक पुत्र हरिहर सुयोग्य छथि। खड्ग खान खड्ग लए अग्रणी (अगुआ) बनलाह।। 31 ।।

प्रतापक पुत्र जसराज देव छथि जनिक तुलना क्यो नहि लैत छथि। ओतए पल्लिवार वंशक श्रेणीमे सर्वोत्कृष्ट वीर पहुँचि गेलाह जे बाणक जाल (अत्यधिक बाण) सँ युद्ध मे ढीठ बनल छथि।। 32 ।।

भुअदण्डे जुज्झइ दुबल खाति।

परबूह विभानथि तुरअ चापि।।

रट्ठउर कुमर वरवीर लग्ग।

अरिसिरहि घनक्कइ जासु खग्ग॥ 33॥
उजञोन वंस पत्ताप नाम।
थिति साओत राउत तेजधाम॥
सङ्गाम सुलह केदार दास।
सूरत्ते सकत सुरबइ पयास॥ 34॥

(षट्पद छन्द)

आगाँ रण जसराज, बलह पाछाँ से लेक्खिअ।
सूरहि मह जसराज कटक सैनिक मह पेक्खिअ॥
कटकाँई जसराज, पठम बाला से धावइ।
सम्मुख रन जसराज, चन्द-निम्मल जस पाबइ॥
परकटक माह जसराज खाँ, लग्गइ मानस सबहिकाँ।
चउफलिअ भित्ति पलिविम्ब जञो, चारुहु दिस जसराज खाँ॥ 35 ॥
तोरन मारि किअउ राउत्तहि। .....म संजुत्तहि॥
पानि चापे कोपिअ सुरुताने। अन्धारिअ नह-मण्डल बाने॥ 36॥
कान सुन्द कम्मान झनक्के। कम्पइ मेइनि तुरुक तनक्के॥
तं खने रूपनराएन राए। सङ्गर मण्डिअ तुरअ धसाए॥ 37॥
चलिअ तुरङ्ग तुङ्ग दुव्वारे। बाने निवारिअ खग्गह धारे॥
उदय सिंघ नन्दन रन दापे। मारि करिअ कूमर परतापे॥ 38॥
वारन भेदि धरा सर मुक्किअ। खग्ग पहारे रुहिर छिलिक्किअ॥
थल-तरि रन अुसरिअइ माहव। केसवे कुमर करिअ बड़ आहव ॥ 39 ॥
विसम मारि नरसिंघ करन्तउ। मुद्दहत्थ गुणञिए गुनमन्तउ॥
आगाँ जुज्झिअ कुमर मुरारि। राम सिंघ रभसहि कर मारि॥ 40॥
छाया-
भुजदण्डेन युद्ध्यति दुबन खातिः। परव्यूहं विभनक्ति तुरगमारुह्य॥

राठौर-कुमारो वरवीरो लग्नः। अरिशिरस्सु झंकृतो यस्य खड्गः।।33।।
उज्जैन वंश्यः प्रताप-नामा। स्थिति साओत-राजपुत्रस्तेजोधामा।।
संग्राम-सुलभः केदारदासः। शूरत्वेन शक्तः सुरपतिः प्रयासे।।34।।
अग्रे रणे यशोराजः, बलस्य पश्चात् स लेखितः।
शूराणां मध्ये यशोराजः, कटक-सैनिकमध्ये प्रेक्षितः।।
कटकाङ्गेषु यशोराजः, प्रथमवारं स धावति।
सम्मुखो रणे यशोराजः चन्द्रनिर्मलं यशः प्राप्नोति।।
परकटकमध्ये यशोराज खानः, लगति मानसे सर्वेषाम्।
चतुःफलितो भित्तौ प्रतिबिम्बो यथा, चतसृष्वपि दिक्षु यशोराजखानः।।35 ।।
तोरणे मारं कृतं राजपुत्रैः। ....संयुक्तैः।।
पाणौ चापं धृत्वा कुपितः सुरत्राणः। अन्धीकृतवान् नभोमण्डलं बाणैः।।36।।
कर्णौ शून्यो धनु-र्झणत्कारेण। कम्पते मेदिनी तुरुष्क-स्तनितकेन।।
तत्क्षणे रूपनारायणो राजा। संगरं मण्डितवान् तुरगं सञ्चाल्य।। 37।।
चलितास्तुरङ्गा तुङ्गाः दुर्वाराः। बाणैः निवारिता खड्गस्य धारा।।
उदयसिंह-नन्दनो रणदर्पितः। मारं करोति कुमारः प्रतापः।।38।।
वारणं भित्त्वा धरासु शरा मुच्यन्ते। खड्गप्रहारैः रुधिराणि उच्छलन्ति।।
स्थलतर्या रणे अग्रे सरति माधवः। केशवकुमारेण क्रियते बहुः आहवः।।39।।
विषमं मारं नरसिंहः करोति। मुद्राहस्तको गुणीश्वरो गुणवान्।।
अग्रे युद्ध्यति कुमारो मुरारिः। रामसिंहो रभसं करोति मारम्।।40।।

हिन्दी- खाति (एक क्षत्रिय वंश) कुल के दूबन नामक वीर भुजा रूपी दण्ड से युद्ध कर रहे हैं और घोड़े पर चढ़कर शत्रु के व्यूह को फोड़ रहे हैं (विभिन्न कर रहे हैं)। राठौर कुल के राजकुमार बलवीर युद्ध में लग गए हैं, जिनका तलवार शत्रु के सिर पर ही खनकता है।।33।।

उज्जैन वंश के राजपूत प्रताप नाम के आ गये हैं। स्थितिसाउत नाम वंश के राउत= राजपुत्र तेज के घर बने हुए हैं। केदार दास युद्ध हेतु सुलभ है। अपनी शूरता से सुरबइ (सुरपति) राजपूत प्रयास में सक्षम हैं।।34।।

रण में आगे आगे जसराज चल रहे हैं। पीछे वे ही दिखाई देते हैं, शूरों के मध्य जसराज ही हैं, सैन्य शिविरों में वे ही दीख पड़ते हैं। सैन्यों में जसराज पहले ही वार में दौड़ पड़ते हैं। रण के सम्मुख जसराज चन्द्रमा के समान निर्मल यश पा रहे हैं। शत्रुसैन्यों में जसराज खाँ सभी के मन में बैठे हैं, इस तरह चमकीले दिवाल पर चारों ओर पड़ने वाले प्रतिबिम्ब के समान रण में चारों ओर जसराज खाँ ही विराजमान मालूम पड़ते हैं। अर्थात् उनमें इतनी फुर्ती एवं वीरता है कि क्षणभर में सभी मोर्चे पर विद्यमान रहते हैं।। 35।।

प्रवेशद्वार (तोरण) पर राजपूतों ने युद्ध मचा दिया है। ... संयुक्त हो गये हैं। सुलतान ने कुपित होकर धनुष हाथ में रखे आकाश-मण्डल को अन्धेरा कर दिया है।। 36।।

धनुष की झंकार से लोगों का कान शून्य (श्रवण शक्तिहीन) हो गया है। तुर्कों के गरजने से पृथ्वी काँप उठती है। उसी क्षण रूपनारायण राजा शिवसिंह घोड़ा के साथ युद्ध भूमि को अलंकृत कर दिये।। 37।। दुर्वार (रोके न जाने वाले) घोड़े चल पड़े। बाण से खड्ग की धारा को राकेते थे। उदय सिंह के पुत्र कुमर प्रातप रण में दर्प से युद्ध करते थे। (प्रताप सिंह शिवसिंह के चचेरे भाई थे)।।38।।

वे (शत्रु के) हाथी को विदीर्ण कर पृथ्वी पर शर छोड़ रहे हैं। उनके तलवार के प्रहार से शोणित छलक रहे हैं। रथ (स्थल तरी = धरती की नौका) पर सवार हो रण में माधव आगे बढ़ रहे हैं और केशव कुमर उत्कृष्ट युद्ध कर रहे हैं।। 39।।

नरसिंह कठिन युद्ध कर रहे हैं। मुद्राहस्तक (खजाञ्ची) गुणवान् गुणीश्वर आ गये हैं। कुमर मुरारि आगे में युद्ध कर रहे हैं। रामसिंह हठपूर्वक लड़ रहे रहे हैं।। 40।।

मैथिली- भुजारूपी दण्ड सँ दुबन खाति युद्ध करैत छथि आ घोड़ा पर चढ़ि शत्रुक व्यूह (सुसंगठित दल) कें विभिन्न (छिन्नभिन्न) करैत छथि । राठौर वंशक परम वीर कुमर युद्धमे लागि गेलाह जनिक खड्ग शत्रुक माथ पर घनघनाइत छल।। 33 ।।

उजौन वंशक प्रताप नामक वीर आ स्थितिसाओत नामक राउत (राजपुत्र) तेजसँ परिपूर्ण छथि। केदार दास संग्राम मे सुलभ छथि। सुरबइ (क्षत्रिय)क प्रयास हुनक शूरता सँ सशक्त भेलनि।। 34 ।।

जसराज वीर रणमे आगाँ चलैत छथि, सेनाक पाछाँ सेहो हुनक लेखा होइत अछि, शूर-सभक मध्य जसराज छथि, सएह शिबिरक सेनाक बीचमे सेहो देखाइत छथि। सैन्यप्रयाण मे जसराज प्रथमहि बेर दौड़ि जाइत छथि। रणक सामना-सामनी जसराज चन्द्रमाक समान निर्मल यश पाबि रहल छथि। शत्रुक शिबिर मे जसराज खाँ सभक मनमे लागि गेल छथि (डर बनल छथि)। एहि तरहेँ चारू दिस भीत पर पड़ैत प्रतिबिम्ब जकाँ जसराज खाँ चारू दिस छथि। (हुनकामे एतेक फुर्ती छनि जे छन भरि मे सब मोर्चा पर विद्यमान रहैत छथि)।। 35 ।।

तोरणद्वारि पर राजपूत सब मिलि कए मारि कएलनि। हाथमे धनुष लए सुलतान कुपित भेल आ नभोमण्डल (आकाश) केँ बाण सँ अन्हार कए देलक।। 36 ।।

धनुषक झनकार सँ कान सुन्न भए जाइत छलैक। तुर्कक कुदला-फनला सँ पृथ्वी काँपि रहल छल। ताही खन राजा रूपनारायण शिवसिंह घोड़ा हुलाए युद्धभूमिकेँ मण्डित कएलनि।। 37 ।।

ऊँच जबर्दस्त (दुर्निवार=नहि रोकबा योग्य) घोड़ा पर चढ़ि चललाह आ बाण सँ शत्रुक तलवारक धारकेँ रोकए लगलाह। उदय सिंहक पुत्र प्रताप रणमे दर्प (अहंकार) सँ मारि करए लगलाह।। 38 ।।

हाथीकेँ भेदि कए बाण धरती पर छोड़ल गेल। खड्गक प्रहारसँ शोणित छिलकि गेल। स्थलतरी (भूमिपरक नाओ=रथ) सँ युद्धभूमिमे माधव आगू बढ़लाह। केशव कुमर बहुत युद्ध करए लगलाह।। 39 ।।

नरसिंह ओ गुणवान् मुद्राहस्तक (मोहर देबाक अधिकारी) नरसिंह शत्रु दल सँ बेजोड़ मारि करैत छथि। कुमर मुरारि आगाँ युद्ध कए रहल छथि। राम सिंह वेग सँ मारि करैत छथि।। 40 ।।

रट्ठउरो जुअराज गरिट्ठउ। चाहुआन कारिक तं दिट्ठउ।।
पृथिवी सिंघ करिअउ बहु मारि। दरसिअ सकति सकति भण्डारि।। 41।।
सामि सनाह हुअउ दुइ सोदर। जगत विदित विद्दू दामोदर।।

भीषू राजवलभ जनरञ्जन। मुदहथ सोने परबल भञ्जन।। 42।।
सङ्कर माह नामि पहुछाहर। रन अगुसरिअ लेखि विज्जाहर।।
कमलाकर सङ्गाम समत्थो। परबलहर हरपति मुदहत्थो।। 43।।
कुमरपाल राउत्त विसेखिअ। राउतपति सारङ्ग सुलेखिअ।।
सङ्कर साहस दुहरन इच्छिअ। आपे माथे खग्ग पलिच्छिअ।। 44।।
बुद्धिराज-नन्दन शिवसिंघे। भवाइ जुज्झिअ कुञ्जरलंघे।।
वसन्त-तनय माधव वक्खानिञ।
सुजञे मारि कुण्डि जे आनिञ।। 45।।
राएह घाए सत्तु जबे दिज्जिअ। जइ सिंघ ह...।।
खग्गहि अग्गि उठिअ खग्गन्तहि।
रन अङ्गिरिअ खान हनुमन्तहि।। 46।।
जएरूप सिरिपति जुज्झिअ पासे। खण्डिअ सत्तुथान कविदासे।।
माधव सिंघ परानहि हनिअउ। जासु पहारे गयघल पलिअउ।। 47 ।।

(षट्पद छन्द)

उभय सुहन भीनन्ते आगु चप्परइ सत्तु रन।
धीरदेव को तनय तखने सङ्गाम दम्भ हन।।
सहसे दमसि वङ्कान काटि करबाले विवहि परि।
जूहे मारि असवार, सामि-सम्मान हिअअ धरि।।
बहु कज्ज परक्कम दरसि कहु, कुन्द कुसुम संकास अस।
निअ जीव पलट्टे मेइनी, थीरू थिर कए गएउ जस।। 48।।

(दोहा छन्द)

थीरू आकम होन्त रण, हुअउ महीसिंघ रुट्ठ।
राए पलिच्छिअ पावकउ, नाञि सिंघ गअ ठट्ठ।। 49।।

(गद्य)

राअन्हि करे परसेना सञ्चारे, राउतन्हि करे अस्त्रव्यापारे, हुण्डार-हिण्डलाकुलित-हरिणयूथन्याय परकटअ परबले थिर न रहिअ। पाछा सञो पातिसाहे पडिगहिअ। उभय-कटक-सम्मिलन-संघाते खण्डे खण्डे वीर सूर रन करावन्ते। एत दूर बलिआ सञे बाहुदर्प बढ़ाबन्ते, खण्डि कूटि गयघल चउदन्त विदलावन्ते। राअक माथा काण्ड लागु, सरक सोभाए भाल लागल, जनि सिंह कॉं केसर जामल, सुरतान के घाअ देल, जगत सुप्रसिद्ध भेल।। 50।।

छाया–

राठौर युवराजो गरिष्ठः। चौहानः कारिक नामा तत्र दृष्टः।।

पृथ्वी सिंहः करोति बहु मारम्। दर्शयति शक्तिं शक्तिःभाण्डागारिकः ।। 41 ।।

स्वामिसन्नाहौ भवतो द्वौ सोदरौ। जगद्विदितौ विद्याधर-दामोदरौ।।

भीषुको राजवल्लभो जनरञ्जः। मुद्राहस्तकः सोने परबलभञ्जनः।। 42 ।।

सङ्गरमध्ये नामी प्रभुसागरः। रणे अग्रे सरति लेखी विद्याधरः।।

कमलाकरः संग्राम-समर्थः। परबलं हरति हरपतिः मुद्राहस्तकः।। 43।।

कुमरपालो राजपुत्रो विशिष्यते। राजपुत्रपतिः सारङ्गः सुलिख्यते।।

सङ्गरे साहसं दुःखरणः इच्छति। आत्ममस्तके खड्गं परीक्षते।। 44।।

बुद्धिराज-नन्दनः शिवसिंहः। भवः युद्धयति कुञ्जरं विलंघ्य।।

वसन्त-तनयो माधवो व्याख्यातः। सुजयः मारयित्वा कुण्ठितान् आनीतवान्।। 45।।

राज्ञे घातं शत्रु र्यदा दत्तवान्। जयसिंहः ...।।

खड्गेषु अग्निः उत्थितः खड्गान्तैः।

रणम् अङ्गीकरोति खानः हनुमान्।। 46।।

जयरूपः श्रीपतिश्च युद्ध्यतः पार्श्वे।

खण्डयति शत्रुस्थानं कविदासः।।

यस्य प्रहारैः गजघटा पतति।। 47।।

उभये सुभटाः संभिन्नाः अग्रे आक्रामन्ति शत्रून् रणे।
धीरदेवस्य तनयः तत्क्षणं संग्राम-दम्भं हन्ति।।
सहस्रं सहसागत्य प्रवीराः, छित्त्वा करवालैः विविध-प्रकारेण।
यूथेन सह मारयित्वा अश्ववारं, स्वामिसम्मानं हृदये धृत्वा।।
बहुकार्येषु पराक्रमं दर्शयित्वा, कुन्द-कुसुम-संकाशम् एवम्।
निजजीवस्य परावर्त्तनेन मेदिन्यां थीरूकः स्थिरीकृत्य गतवान् यशः।। 48 ।।
थीरूकः आक्रामति, भवति रणः, अभूद् महीसिंहो रुष्टः।
राज्ञा परीक्षितःपावकेऽपि, यथा सिंहो गजसम्मर्दे।। 49।।

राज्ञां परसेना-सञ्चारेण, राजपुत्राणाम् अस्त्रव्यापारेण, हुण्डारहिण्डलाकुलित-हरिणयूथन्यायात् परकटकः परबले स्थिरो न भवति। पृष्ठतः पातिसाहः प्रतिगृह्णाति। उभय-कटक सम्मिलनसंघाते खण्डं खण्डं वीराः शूराः रणं कारयन्ति। एतद्दूरं बलीयसा बाहुदर्पं वर्धयन्तः खण्डयित्वा कुट्टयित्वा गजघटा-चतुर्दन्तान् विद्रावयन्ति। राज्ञो मस्तके काण्डं लग्नं, शरस्य शोभा भाले लग्ना, यथा सिंहस्य केसरो जातः, सुरत्राणाय घातं दत्तवान्, जगति सुप्रसिद्धमभूत्।। 50।।

हिन्दी- राठौर कुल के युवराज भारी योद्धा हैं। चौहान वंश के कारी नामक वीर भी वहाँ दीख पड़ते हैं। पृथ्वी सिंह बहुत लड़ रहे हैं। शक्ति भण्डारी अपनी शक्ति दिखा रहे हैं।। 41।।

स्वामी (मालिक=शिवसिंह) के रक्षक (सन्नाह=कवच) के रूप में संसार प्रसिद्ध विदू (विद्याधर) और दामोदर ये दोनों सहोदर भाई हैं। वहाँ राजवल्लभ भीषू लोगों को आनन्दित करने वाले हैं। शत्रुसेना को तोड़ने वाले मुद्राहस्तक (खजांची) सोने नामक व्यक्ति उपस्थित हैं।। 42।।

प्रभुसागर युद्ध में नामी हैं। लेखी (पत्र लेखक पदाधिकारी) विद्याधर युद्ध में आगे बढ़े। संग्राम में सक्षम कमलाकर हैं और मुद्राहस्तक हरपति शत्रु सैन्य को हर लेते हैं।। 43।।

राउत कुमरपाल विशिष्ट हो रहे हैं। राउतपति सारंग उल्लेखनीय व्यक्ति हैं। दुखरन नामक योद्धा रण में साहस की इच्छा करते हैं और अपने माथे पर खड्ग की परीक्षा करते हैं।। 44।।

बुद्धिराज के पुत्र शिवसिंह(आ गये) हैं। भवाइ(भवनाथ) हाथियों को लांघकर युद्ध कर रहे हैं। वसन्त के पुत्र माधव विख्यात हैं। सुजय नामक वीर मार कर डरे हुए शत्रु को पकड़ लाते हैं।। 45।।

राजा को शत्रु ने जब आघात पहुँचाया तो जयसिंह (आगे बढ़कर उसे रोक कर भगा दिया)। तलवार से तलवार टकराने पर आग उठती है।। हनुमन्त खान ने रण में प्रवेश करना स्वीकार कर लिया।। 46।।

जयरूप एवं श्रीपति पास-पास ही (शत्रुओं से) लड़ रहे हैं। कविदास शत्रु के स्थान को खण्डित कर रहे हैं। माधव सिंह (शत्रु को) जान से ही मार रहे हैं, जिनके प्रहार से गजघटा (हाथी के झुण्ड) गिर रहे हैं।। 47।।

दोनों दल के वीर (सुभट) भिड़ गये हैं और आगे होकर शत्रु पर आक्रमण करते हैं। धीरदेव के पुत्र तभी संग्राम के दर्प को खत्म कर देते हैं। हजारों वीरबाँका सैनिक रण को रौंदते हुए विविध प्रकार से तलवारों द्वारा शत्रुओं को काटकर हाथी के झुण्डों के साथ घुड़सवारों को मारकर, स्वामीके सम्मान को हृदय में धरते हैं। बहुतों कार्यों में पराक्रम दिखाकर अपने जान को लौटा कर इस पृथ्वी पर थीरू ने कुन्द फूल के समान यश को स्थिर कर लिया है।। 48।।

थीरू आक्रमण कर रहा है और युद्ध हो रहा है। मही सिंह रुष्ट हो गये हैं। राजा उन्हें केवल सिंह और हाथी के जुटान में ही नहीं, अपितु अग्नि में भी परिक्षित कर रहे हैं।। 49।।

राजाओं के शत्रुओं में विचरण करने से, राजपूतों के अस्त्र फेंकने से भेड़ियों के द्वारा आक्रमण से व्याकुल हरिण के झुण्ड की तरह शत्रु सेना विरोधी बलके समक्ष टिक न सकी। पीछे से बादशाह पकड़ने लगे। दोनों सैन्योंके इकट्ठे हुए समुदाय में खण्ड-खण्ड होकर शूर-वीर युद्ध करा रहे हैं। इतने दूर आकर अपने से बलवानों के साथ बाँह के दर्प को बढ़ाते हुए खण्ड कर तथा कूटकर गजघटा (हाथी के झुण्ड) के हाथियों से सैन्यों को कुचलबा रहे हैं। राजा (शिवसिंह) के माथे पर तीर लगे, जिनकी शोभा मस्तक पर लग रही है जैसे सिंह को केसर (गले का बाल) उग गया हो। सुलतान के ऊपर प्रहार किया, जो विश्व में प्रसद्ध हो गया।। 50।।

मैथिली- राठौर युवराज भारी योद्धा छथि। ओतए कारिक चौहान सेहो देखल गेलाह। पृथिवी सिंह बहुत मारि कएलनि। शक्ति भण्डारी अपन शक्ति देखओलनि।। 41 ।।

दुइ सहोदर संसार प्रसिद्ध वीदू आ दामोदर स्वामीक (राजा शिव सिंहक) सन्नाह (कवचस्वरूप रक्षक) भेलाह। ओतए राजवल्लभ (प्रियपात्र) भीषू लोकक़ें आनन्दित कएलनि। मुद्राहस्तक (मोहर रखनिहार) सोने शत्रुक सेनाक भंग कएलनि।। 42 ।।

युद्धभूमिमे प्रभुसागर नामी भेलाह। लेखापाल विद्याधर रणमे आगू भेलाह। कमलाकर संग्राममे समर्थ (सशक्त) भेलाह। मुद्राहस्तक हरपति शत्रुक सेनाकें हरि लैत छथि।। 43 ।।

कुमरपाल राउत विशेषरूपेँ छथि। राउतपति सारंग उल्लेखनीय भेलाह। दुखरन संग्राममे साहस चाहैत छथि जे अपनहि माथ पर खड्गक परीक्षा करैत छथि।। 44 ।।

बुद्धिराजक पुत्र शिवसिंह छथि आ भवाइ हाथीकें नांघि युद्ध करैत छथि। वसन्तक पुत्र माधवक गुणक बखान कएल गेल। सुजय मारि करैत डराएल शत्रुकें आनि लेल।। 45 ।।

जखन राजा शिवसिंह पर शत्रु आघात देलक त जयसिंह तकरा रोकि देलनि। युद्धमे खड्ग सँ खड्गक टकरएला सँ आगि उठए लागल। तखन हनुमान् खाँ रणक अङ्गीकार (स्वीकार) कएलनि।। 46 ।।

जयरूप आ श्रीपति लगहि रहि युद्ध कएलनि। कविदास शत्रुक स्थान कें खण्डित कएलनि। माधव सिंह शत्रुकें जानसँ मारलनि, जनिक प्रहार सँ गजघटा (हाथीक झुण्ड) खसि पड़ल।। 47 ।।

दुनू दलक सुभट भिड़ि गेल आ आगाँ भए रणमे शत्रु पर आक्रमण करए लागल। तखन धीरदेवक पुत्र संग्राममे शत्रुक दम्भ (अहंकार) कें मारि देलनि। हजारो वीरबंका सब दमादम पहुँचि तरुआरि सँ विविध प्रकारें शत्रुकें काटए लागल। हाथी-घोड़ा सभक झुण्ड सहित सबार केँ मारि स्वामीक सम्मान कें हृदयमे रखने रहल। बहुत पराक्रमक काज देखा कए अपन जान पलटा कए (बचा कए) थीरू एहि पृथ्वी पर कुन्दक फूलक समान यशकें स्थिर कए लेलनि।। 48 ।।

थीरू आक्रमण कएलनि। युद्ध होमए लागल। महीसिंह कुपित भेलाह। राजा हुनका आगियो मे परीक्षा लेने छलथिन, जेना सिंह हाथीक ठट्ठ (झुण्ड) मे परीक्षित होइत अछि।। 49 ।।

राजासभक शत्रुसेना मे संचार (हुलला) सँ, राउत सभक अस्त्र चलओलासँ, हुड़ार (भेड़िया)क आक्रमण सँ व्याकुल हरिणक झुण्डक समान शत्रुक सैन्यशिबिर विरोधी राजाक सेनाक समक्ष स्थिर नहि रहि सकल आ तकरा पाछाँ सँ बादशाह घेरलक। दुनू सेनाक भिड़न्तक आघात-प्रतिघात सँ खण्ड-खण्ड होइत शूर-वीर रण करबैत रहलाह। एतेक दूर आबि बरिया (अधिक बलशाली शत्रु) सँ बाँहिक बलक घमण्ड बढ़बैत गेलाह। खण्ड-खण्ड कए कूटि गजघटाक (हाथीक झुण्डक) मत्ता हाथीकें हुलाए सेनाकेँ पिचबैत रहलाह। राजा शिव सिंहक माँथ मे बाण लागि गेलनि। ओहि बाणक कपार पर शोभा लागि गेल जेना सिंहकें केसर (गराक केश) जनमि गेल हो। ओ सुलतान पर प्रहार कएलनि जे संसार मे सुप्रसिद्ध भेल।। 50 ।।

(दोहा छन्द)

सए सुरुतानिञे दण्ड घा, सुहन कोटि सञो मारि।
प्रलअ काल जेमे विज्जु चल, तेमे पलिअउ तरवारि।। 51।।

(गद्य)

तादृक् तरवारिधारा-धोरणी हेरन्ते, गारि पारि गौरवा प्रेरन्ते, पट्टीस धार वरिसावन्ते, आत्मशौर्य सेना जञो करहु, एकहि बेरि सुरुतान केँ धरहु। पुनु राए करु संगाम, जनि दसग्रीवक दरसने रुट्ठ राम।। 52।।

छन्दः (स्रग्विणी)

राए कोहाइ सङ्गाम सम्भालिआ।
सत्तु मत्थेहि खग्गग्गि पज्जालिआ।।
मुण्ड फुट्टन्त, लोट्टन्त रुण्डा रना।

हत्थि गाहन्त गाहन्त वीदारना॥ 53॥

घाअ घुम्मन्त घुम्मन्त णं कालना।

मार धावन्त धावन्त वीरा रना॥

खग्ग सल्लेहि भल्लेहि रत्तुच्छला।

भेरि नीसान काहार कोराहला॥ 54॥

भूअ वेआल रत्ते रने छक्किआ।

मत्त भेरुण्ड रुण्डन्तरे लुक्किआ॥

हक्क हक्कार कण्ठीरवा गज्जहीं।

तुङ्ग तुङ्गा गआ सोनिञा मज्जहीं॥ 55॥

सूर भीनन्ति लग्गन्ति तो भीसना।

वीर गज्जन्ति तज्जन्ति तो हिंसना॥

पाअ-भारेहि कम्पेइ विस्सम्भरा।

रेनु उड्डेइ छुट्टेइ धाराधरा॥ 56॥

(गद्य)

तइसना घोरातिघोर संगामावसर दिव्य कण्ठाटवी वीरन्हि के बान्धि, कृतान्तस्स कृतार्थे सान्धि, परिघ लए, कपट-कमनीय गढ़िक आलि चालि, खम्भ उपालि, राअ सिव सिंघ देव उच्छलिअ, जनि दैत्य सञो दामोदरे ललिअ॥ 57॥

छाया-

शतं सुरत्राणीयाः दण्डैः घातयन्ति, सुभटकोटिभिः मारं कुर्वन्ति।

प्रलयकाले यथा विद्युत् चलति, तथैव पतन्ति तरवारयः॥ 51॥

तादृक् तरवारिधारा-धोरणीं पश्यन्तः, गालिं पठित्वा गौरवं प्रेरयन्तः, पट्टिशधारं वर्षयन्तः, आत्मशौर्यं सैनिका यदि कुर्युः तर्हि एकवारेणैव सुरत्राणं धरेयुः। पुनः राजा करोति संग्रामं, यथा दशग्रीवस्य दर्शनेन रुष्टो रामः॥ 52॥

राजा क्रुद्धः संग्रामं सम्भारितवान्।

शत्रुमस्तकेषु खड्गाग्निं प्रज्वालितवान्॥

मुण्डाः स्फुटन्ति लुठन्ति रुण्डा रणे।
हस्तिनः ग्राहं-ग्राहं विदारयन्ति।। 53।।
घातयन्ति घूर्णं-घूर्णं ननु कालरूपाः।
मारयन्ति धावन्तो धावन्तो वीरा रणे।।
खड्गैः शल्यैः भल्लैश्च रक्तोच्छलनम्।
भेरी-निःस्वान-काहार-तूर्याणां कोलाहलः।। 54।।
भूतवेतालाः रक्तं रणे पीतवन्तः।
मत्ताः भेरुण्डाः रुण्डान्तरे लुक्किताः।।
हक्क-हक्कारं कण्ठीरवाः गर्जन्ति।
तुङ्गतुङ्गाः गजाः शोणते मज्जन्ति।। 55।।
शूराः सम्मिलन्ति लगन्ति तथा भीषणाः।
वीरा गर्जन्ति तर्जन्ति तथा हिंसकाः।।
पादभारैः कम्पते वसुन्धरा।
रेणुः उड्डयते, मुञ्चन्ति धाराधराः।। 56।।

तादृशे घोरातिघोर-संग्राम वसरे दिव्यकण्ठाटवीं वीराणां बद्धवा कृतान्तस्य कृतार्थे संसाध्य, परिघं लात्वा कपट-कमनीय-दुर्गस्य आलिं चालियत्वा, स्तम्भम् उत्पाट्यं राजा शिवसिंह देव उच्छलितवान्, यथा दैत्याद् दामोदरो लडितवान्।। 57।।

हिन्दी- सुलतान के सैकड़ों वीर डण्डे से आघात करते हुए करोड़ों वीरों से मार करते हैं। प्रलय काल में जैसे बिजली चलती हैं, उसी तरह तलवार चल रही हैं।। 51।।

उस प्रकार के तलवार की धारा की श्रेणी को देखते हुए, गाली पढ़कर गौरव (अपने को ऊँचा होने का) अनुभव करते हुए, पट्टिश (बर्छे) की धार को बरसाते हुए यदि सेना अपनी शूरता दिखाबे तो एक ही बार में सुलतान को पकड़ ले। फिर राजा (शिवसिंह) संग्राम कर रहे हैं, जैसे रावण को देखकर रुष्ट हुए राम हों।। 52।।

राजा शिवसिंह ने कुपित होकर संग्राम को सम्भाल लिया और शत्रुओं के मस्तकों से खड्ग रूपी आग को प्रज्वलित कर दिया। वहाँ मुण्ड फूटते तथा रुण्ड लोटते थे। हाथी रौंदते हुए जिसको पाते थे उसको विदीर्ण कर रहे थे।। 53।।

वे घूमते घूमते प्रहार कर रहे थे जैसे काल हों और दौड़ कर वीरों को मार रहे थे। खड्ग, बर्छे और भाले से शोणित उछाले जा रहे थे। ताशा, नगाड़ा, धुतहू आदि रणवाद्य से महान् शोर मच रहा था।। 54 ।।

भूत, वेताल आदि ने रण में शोणित छाँका। मत्त सियार रुण्ड (कटे मनुष्य के धर) के तले छिपे हुए हैं। हक्क-हक्क आवाज करते हुए मत्त हाथी (कण्ठीरव) गरज रहे हैं। ऊंचे-ऊंचे हाथी भी शोणित में डूब रहे हैं।। 55।।

शूर जब भिड़ते हैं तो भयानक लगते हैं, वीर जब गरजते हैं, तरजते हैं तो हिंसा भड़क उठती है। पैरों के दबाव से पृथ्वी काँप उठती है। धूल उड़ रही है और मेघ छूटकर व्याप्त हो रहे हैं या बरस रहे हैं।। 56।।

उस प्रकार के घोर संग्राम के अवसर पर वीरों के दिव्य कण्ठ रूपी वन को बाँध कर कृतान्त (यमराज) के लिए साध (सिद्धकर) रहे हैं। ढाल लेकर छल पूर्वक सुन्दर (बाहर से सुन्दर) गढ़ों की दीवार को ढाहकर खम्भों को उखाड़ कर राजा शिवसिंह देव उछल पड़े जैसे दैत्य (हिरण्य-कशिपु) से दामोदर (नरसिंह) लड़ रहे हों।। 57।।

मैथिली- सुलतानक सैकड़ो वीर डंटा सँ आघात कए कड़ोरो सुभट (योद्धा) सँ मारि करैत अछि। जेना प्रलयकालक विद्युत् चलैत अछि तेहने तरुआरि चलि रहल छल।। 51 ।।

ताहि तरहक तरुआरिक धाराक पाँतीकें देखैत, गारि पढ़ि गौरव बढ़बैत, बर्छाक धार बरिसबैत जँ सेना अपन वीरता प्रदर्शित करए तँ एकहि बेर मे सुलतान कें पकड़ि लेबए। पुनः राजा शिवसिंह युद्ध करए लगलाह जेना रावणकें देखला पर कुपित राम होथि।। 52 ।।

राजा शिवसिंह कुपित भए संग्राम कें सम्हारि लेलनि, शत्रुक माँथ पर खड्गरूपी आगिकें पजारि देलनि। युद्ध मे मुण्ड फुटए लागल आ रुण्ड

(कटल धर) रणभूमिमे लोटाए लागल। हाथी हुलैत-हुलैत सैन्य सबकें फाड़ए लागल।। 53 ।।

आ घूमि-घूमि कए मारए लागल जेना ई काल हो। दौड़ैत-दौड़ैत रणमे वीर सब मारए लागल। खड्ग, वर्च्छा ओ भाला लगला सँ शोणित उछलए लागल। ढ़ोल, ढाक ओ धुतहू बाजाक घोर शब्द होबए लागल।। 54 ।।

भूत-वेताल सब रणमे भरि छाक शोणित पीलक। नरमांस खाए मत्त भेल सियार रुण्डसभक (मूड़ी कटल देहक) दोगमे नुकाए रहल। हक्क-हक्क आबाज करैत सिंह गर्जए लागल, ऊँच-ऊँच हाथी सब शोणित मे डूबए लागल।। 55 ।।

शूर सब भिड़ैत अछि (लड़ैत अछि) त डराओन लगैत अछि, क्रोधित भेल गर्जन-तर्जन करैत अछि तँ हिंसा होइत अछि। ओकरा सभक पएरक भारसँ पृथ्वी काँपए लागल, धूरा ऊपर उठए लागल आ मेघ छुटए (टूटि-टूटि खसए) लागल।। 56 ।।

तेहन घोर सँ घोर संग्रामक अवसर मे वीर सभक दिव्य (अति सुन्दर) कण्ठरूपी वन केँ बान्हि, यमराजक लेल साधि (सिद्ध कए=प्रस्तुत कए), ढाल लए कपट पूर्वक निर्मित सुन्दर गढ़ीक (किलाक) आरि (माँटिक देवाल) कें चलाए (खसाए) खाम्ह उपाड़ि राजा शिवसिंहदेव उछलि पड़लाह, जेना दैत्य सँ विष्णु भगवान् लड़ैत होथि।। 57 ।।

(षट्पद छन्द)

पुनु उट्ठिअ सिवसिंघ बप्प-पए भक्तिपरायन।
अतप्पेन तितिअउ, पुहुवीपति, गरुडनरायन।।
बे पक्खर-सम समहि भम्म, अगुसरिअ समहि सम।
आगु पाछु नहि होए वेवि नीसान पड़ल जम।।
विचलन्त सिरिस तरु पत्त जओ, तुलुक कहइ किछु बाढ़ि कहु।
पट्टीस धारे बरिसन्त रण, पहर एक सुरताने सहु।। 58।।

(षट्पद छन्द)

भङ्ग दिअउ गउडेस, गरुवि निअ लाज गमाइअ।

ताहि देखु सिवसिंघे दीठि सफलत्तण पाइअ।।
सगरा रन आन्दोल, जलधि-कल्लोल पलउ जनि।
चल अनन्त परवीर मील, जञो वधिअ मनिञे मनि।।
उच्छन्त तुलुक मदचुण्ण जा, भङ्ग भीत सब भागए।
लोक घलवाहि पलाए चलु, हेरए काइर पाछु गए।। 59।।

(जयकरी छन्द)

पीठि देल सबहि जबने। सुरुतानक भङ्ग टेकब कमने।।
पाछा हेरि धरणि खोहि। अठकोस घाव आकर सोहि।। 60।।
पाछु न हेरए तुलुक भागल। अगहरिआ पाइक लुटए लागल।।
सोन रूप मुकुता रतन। काँस ताम्ब छाड़ल जतन।। 61।।
लाखे नड़ाउ कोड़ि घाट। देउला एहन पाए रुन्धल बाट।।
राअ-कटक ता चलल जाइअ। आँतरे आँतरे टाकाओ पाइअ ।। 62 ।।
सनाह पाखर सेल भाल। टार नेजा लकाइ ढाल।।
पललि पाइअ छाकहि ताण्डी। फेकल टूटलि फूटलि हाण्डी ।। 63 ।।

छाया-

पुनः उत्थितः शिवसिंहः पितृपद-भक्तिपरायणः।
अतर्पणेन तृप्तीकृतः पृथ्वीपतिः गरुडनारायणः।।
द्वौ प्रेक्षपास्त्रौ इव समम् एव भ्रमतः, अग्रे सरतः सममेव।
अग्रपश्चात् न भवतः द्वयोः सीमारेखा पतिता स्थिरा।
विचलन्ति शिरीषतरुपत्राणि इव, तुरुष्काः कथयन्ति किमपि वर्धयित्वा।
पट्टिश-धारे वर्षति रणे, प्रहरमेकं सुरत्राणः सहते।। 58।।
भङ्गं प्राप्तवान् गौडेशः, गुर्वीं निज-लज्जाम् अगमयत्।
तद् दृष्ट्वा शिवसिंहः, दृष्टेः सफलतां प्राप्नोत्।।
सकलो रण आन्दोलितः, जलधिकल्लोलः जातः यथा।
चलन्ति अनन्ताः परवीराः, मिलन्ति यथा हन्तुं मणिभिर्मणिनः।।

उच्छ्वसन्तः तुरुष्काः मदचूर्णाः यावत्, भङ्गभीताःसर्वे भग्नाः।
लोकाः गृहाभिमुखं प्रपलाय चलिताः, पश्यन्ति कातराः पश्चाद् गत्वा ।। 59 ।।

पृष्ठं दत्तवन्तः सर्वे यवनाः। सुरत्राणस्य भङ्गं सहेत कतमः।।
पश्चाद् विलोक्य धरणिं खनित्वा। अष्टक्रोशं धावन्ति आकरं शोधयित्वा ।। 60 ।।

पश्चाद् न पश्यन्ति तुरुष्काः भग्नाः। अग्रहारकाः पदिकाः लुण्टयितुं लग्नाः ।।
स्वर्णं रूप्यं मुक्ता रत्नम्। कांस्यं ताम्बं त्यक्तं यावत्।। 61।।

लक्षं निधापितं निखन्य घट्टम्। धनम् एतादृशं प्राप्य रुद्धो वाटः।।
राज-कटकाः तत्र चलिताः जाताः। अन्तरे अन्तरे रूप्यकाणि अपि प्राप्तवन्तः ।। 62 ।।

सन्नाहं प्रक्षरं शल्यं भल्लम्। प्रासं नाराचं लकाइं परिघम्।।
पतिता प्राप्ता पीता ताली। क्षिप्ता त्रुटिता स्फुटिता हण्डिका।। 63।।

हिन्दी- इसके बाद पिता के चरण में भक्ति रखने वाले शिवसिंह उठ गये। उन्होंने विना तर्पण के ही राजा गरुड़नारायण (देवसिंह= शिवसिंह के पिता) को तृप्त कर दिये। वे दोनों वीर दो पाखरों (घोड़ेपर कसे जीन के दो भाग में लटकते अवश्वकवचों) के समान एक साथ ही घूमते हैं, साथ ही आगे बढ़ते हैं, आगे-पीछे नहीं होते, जैसे दोनों की समानान्तर रेखा पड़ गयी हो। जैसे शिरीष के पत्ते झड़ते हैं वैसे ही तुर्क लोग बढ़ा-चढ़ाकर कछ बड़बड़ाने लगे। युद्धभूमि में पट्टिश (तीक्ष्ण महाबाण) की धारा बरस रही थी, जिसे एक प्रहर एक सुलतान सहते रहे।। 58।।

गौडेश भङ्ग(पराजय) स्वीकार कर भाग गये और अपनी गौरवयुक्त लज्जा खो चुके। इसे देखकर शिवसिंह देव ने अपनी दृष्टि की सफलता पाई । सम्पूर्ण रण आन्दोलित हो रहा था, जैसे समुद्र का तरंग उठ रहा हो। अनन्त शत्रु योद्धा चल रहे थे, जैसे साँपों (मणी = साँप) से साँप एक दूसरे को मारने के लिए मिल रहे हों। उसाँस लेते हुए तुर्कों का मद चूर्ण हो गया था। भंग होने के कारण(हारने पर) सब डरकर भाग रहे थे। लोग घर की तरफ भाग रहे थे। कायर सब पीछे जाकर देखने लगे।। 59।।

सभी मुसलमानों ने पीठ दिखा दिया (हार कर भाग गये)। सुलतान की हार को कौन बचा सकता था। पीछे देखते हुए धरती को खोद कर खान (भूगर्भस्थ धन) रख दिया और खजाने को शोधित (स्थापित) कर आठ कोस भाग गये।। 60।।

भागे हुए तुर्क पीछे नहीं देखते थे। वे जिनते सोना, रूपा, मोती, रत्न, काँसा और ताम्बा को छोड़ गये थे, उन सबों को शिवसिंह के अग्रहारक (राजसेवक) और पैदल सैनिक लूटते जाते थे।। 61।।

लाखों की सम्पत्ति को घाट (नदी पार होने के स्थान) खोदकर रख दिया और इस प्रकार की दौलत को पाकर वह रास्ता बन्द हो गया। राजा शिवसिंह के सैनिक बढ़ते गये और बीच बीच में टाका (रुपये) भी पाते गये जिसे छोड़कर तुर्क भागे थे।। 62।।

वे कवच, पाखर (प्रक्षेपास्त्र), सेल (बर्छे), भाले, सहथ, नेजा (लोहे का तीर या बर्छी), लकाई (चौड़ा खड्ग या रणवाद्य) और ढाल को धारण किये हुए थे। वे छिपाकर रखी हुइ ताड़ी पाकर एक ही साँस में पी लेते थे और खाली हाँड़ी को फेंक देते थे।। 63।।

मैथिली- पिताक चरणमे सदा भक्ति रखनिहार राजा शिवसिंह फेर उठलाह । विनु तर्पण कएनहि पिता पृथ्वीपति गरुड़नारायण देवसिंह कें तृप्त कएलनि । दुइ पाखर (घोड़ाक कवच)क समान समान रूपें दुनू दल भ्रमण करैत, समानरूपहिं आगू बढ़ए। फेर दुनू दल आगू-पाछू नहि भए ठमकि गेल जेना निसान (चेन्ह, रेखा) पड़ि गेल हो। विचलित होइत (झड़ैत) शिरीषक पात जेकाँ तुर्क सब किछु बढ़ि-चढ़ि कए कहए लागल। रणमे पट्टिशक (तेज बाणक) धारा बरसैत रहल आ तकरा एक पहर तक सुलतान सहैत टिकल रहल।। 58 ।।

गौड़ेश (बंगालक राजा जे सुलतानक सहायक छल) अपन भङ्ग (हारि) मानि अपन गौरवक लाज गमा लेलक। तकरा देखि शिवसिंह आँखि होएबाक फल पओलनि (आँखि जुड़ओलनि)। सम्पूर्ण रणभूमि आन्दोलित भए गेल (उथल-पुथल मचि गेल), जेना समुद्रक हिलकोर पड़ि गेल हो। अनन्त शत्रुवीर चलए लागल जेना मनहि मन शत्रुक वध कइये लेलक। उसाँस लैत तुर्क सभक मद (घमंड) चूर्ण भए गेलैक, हारिक डरें सब

भागए लागल। लोक घरमुँहा पड़ाए चलल। पाछू जाए कायर (डरपोक) सब देखए लागल।। 59 ।।

सभ यवन पाछू भागल। सुलतानक एहि हारि कें के रोकि सकैछ? ओ सब पाछाँ ताकि धरतीकें कोड़ि धनसम्पत्ति (आकर) संशोधित नुकाए राखि आठ कोस धरि दौड़ि गेल।। 60 ।।

भागल तुरुक पाँछा दिस नहि तकलक। एम्हर सँ राजा शिवसिंहक अगहरिया (अग्रहार पदाधिकारी) आ पैदल सैनिक ओकरा पाछू दौड़ैत, यवनक छोड़ल जतेक सोना, रूपा, मोती, रत्न, काँसा आ ताम छलैक, तकरा लुटए लागल।। 61।।

लाखोक सम्पत्तिकें यवन सब घाट लग माटि कोड़ि ओहि मे नेराए (छोड़ि) देलक। एहन भारी सम्पत्तिक कारण राजाक द्वारा बाट रोकल गेल। ततए राजा शिवसिंहक सैन्यदल चलैत रहल आ किछु अन्तर (दूरी) पर टको पबैत गेल।। 62 ।।

कवच, पाखर (अश्वकवच), पर्दा, भाला, सहथ, नेजा (लोहाक बाण), लकाई (रणवाद्य) आ ढाल कें फेकल पओलक। ओतए नुका कए राखल ताड़ी पाबि भरि छाक पिउलक आ टूटल-फूटल हाँड़ी (लवनी) कें फेक देखलक।। 63 ।।

हेरिअ कासुति हाथे धरि। तिरहुतिआ बोले ससरि करि।।
.................होइ गोबिलि।। 64।।
छागर बाकर खुण्डी आनलि। राउत पाइक कूजा पूरलि।। 65।।

(दोहा छन्द)

केहु न सभालिअ भाजनी, सूरओ काएर भेल।
हाक पार हिअ फाटि मर, हदब तुलुक भए गेल।। 66।।

छन्दः (शालिनी)

मीरा मलिक्का विसप्पेहिं पाएहिं।
कान्तार मज्झे विमुक्कन्ति घाएहिं।।

खोजा सलेबा विचारन्ति उग्गेहि।
शीसा<u>खो</u> मालेहि झानेहि दुग्गेहि। 67॥
बन्दा बेचारा विचारेहि बट्टेहि।
बीबी पलानी हरानी न भेट्टेहि॥
पैरास्तगी एक कापालि पानालि।
बूंदे सराबे उमारा लिखानालि॥ 68॥

छाया-

दृष्ट्वा कास्तृतिं हस्तेन धृत्वा।
तीरभुक्तीय-वचसा संसृत्य..... गामुक्त्वा।। 64।।
छाग-वर्कर-सम्पन्ना खण्डी आनीता।
राजपुत्रपदिकानां चषका: पूरिता:।। 65।।
कमपि न सम्भालयितुं भाजनं जातं, शूरोऽपि कातरो जात:।
आह्वानं पारयति हृदयं स्फारयित्वा म्रियस्व, स्तब्धा: तुरुष्का: जाता:।। 66 ।।
मीरा: मालिक्का: विसर्पन्ति पादै:।
कान्तारमध्ये विमुच्यन्ते घातै:।।
खोजाक: सलीबी च विचारन्ति उग्रै:।
शीशाकं मारयन्ति ध्यायन्ति दुर्गम्। 67।।
सेवको वराक: विचारयति वर्त्म।
पत्नी पलयिता भ्रष्टा न प्राप्यते।।
सज्जिता एकेन कापालिकेन प्राप्ता।
बिन्दुमात्रेण आसवेन धनिभि:लेखापिता।। 68।।

हिन्दी- गहन रास्ते को देखकर तिरहुत की बोली बोलकर ससर कर अपने दल में पहुँच गया।। 64।।

छाग एवं बकड़े की खुण्डी लायी गयी और उससे राजपूतों और पैदल सैनिकों की प्याली भरी गयी।। 65।।

किसी को कोई सम्भालने में सक्षम नहीं मिली, शूर भी कायर हो चले। जोर से पुकार करने के कारण हृदय फटकर मरने लगे। सभी तुर्क स्तब्ध हो गये।।66।।

मीर (प्रधान यवन), मलिक (धनी) आदि पैदल ही चलने लगे और जंगल में जाकर प्रहार से बचने लगे। ख्वाजा (मलिक) और सलीबी (धर्मगुरु) विचार करने के लिए आगे बढ़े तथा छोटी बकरी को मारकर दुर्ग का ध्यान (चिन्तन) करने लगे।। 67।।

बेचारा नौकर राह ढूढ़ने लगा। बीबी भाग गयी और खो गयी, जो मिलती नहीं थी। सजी-सजायी (उस बीबी) को एक कापालिक(साधु) ने पाया, जिसे धनवानों (उमरा) ने एक बूंद शराब देकर लिखबा लिया।। 68।।

मैथिली- कुबाट (एक पेरिया) देखि, परस्पर हाथ धए, तिरहुतिआ बोल सँ ससरि कए अपन दलमे पहुँचि गेल।। 64 ।।

छागर-बाकर (खस्सी)क निकाओल खुण्डी आनल गेल आ ताहिसँ राउत ओ पैदल सैनिकक वाटी भरल गेल।। 65 ।।

सुलतानक पड़ाइत सेना सबकेँ केओ सम्हारएवाली नहि भेटलैक । शूरो सब कायर भेल हाक पाड़ैत छल, हृदय फाटि कए मरि रहल छल । एवंप्रकारें सब तुर्क स्तब्ध (डरें सुटुकि गेल) भए गेल।। 66 ।।

मीर (प्रधान यवन), मलिक (धनी) आदि पएरहि चलए लागल आ जंगलक मध्य मे जाए आघात (प्रहार) सँ मुक्त होहए लागल। ख्वाजा आ सलीबी (धर्मगुरु) विचार करबाक लेल आगू बढ़ल तथा शीशाख (छोटकी बकरी) केँ मारैत दुर्गक (सुरक्षित स्थानक) ध्यान (चिन्तन) करए लागल।। 67 ।।

बेचारा बन्दा (नोकर) बाट ताकए लागल। बीबी (बेगम साहिबा) हेराए गेलैक, पडाए गेलैक, से भेटैक नहि। ओहि पैरास्तगी (सुसज्जित बीबी) कें एक कापालिक (तान्त्रिक) पओलक जकरा एक बूंद शराब दए उमरा (धनी यवन) लिखबा लेलक (अपना नाम सँ अधिकृत करबा लेलक)।। 68 ।।

खोदाए मैदान जंगालिदी देओ।

साहस्से खण्डन्ति खग्गे नदीदेओ।।

पानी नहाना न मिल्लेइ कामेहि।

कूजा गमाआ कर दे गुलामेहि।। 69।।

कूजन्त सम्भार कादीन बत्तेहि।

....।। 70।।

गाबेइ गाबे जसे गाअ साचार।

नामद्द कादीन बत्तेन निक्कार।।

मख्दूम यादास्त मन्ता सुभाखेहि।

हिन्दू-बनिज्जा तकरे भार राखेहि।। 7 1।।

(षट्पद छन्द)

एम जिनिअ सङ्ग्राम, राए सिवसिंघ बहोरिअ।

मायर सम्भारइअ, वप्पकुलवैरि उद्धरिअ।।

कुसुमे बरिसु सुरलोअ दप्पे लाइअ तहँ चन्दन।

राजतिलक शुभ पाबिअ, गरुड़नरायण-नन्दन।।

राउत्तन्हि दिज्जिअ धन, रअन-दाने बलि-कण्ण जिनु।

निञ खग्गधारे उपजाए कहु, नविए राजलच्छी किनु।। 72।।

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

एवं श्रीशिवसिंहदेव-नृपतेः संग्रामजातं यशो

गायन्ति प्रतिपत्तनं प्रतिदिशं प्रत्यङ्गणं सुभ्रुवः।

एतत्कीर्त्तिपताकिका सुविदिता वाणी च विद्यापते-

रामचन्द्रार्कमियं विराजतु मुखाम्भोजेषु भूयः सताम्।। 73।।

इति श्रीविद्यापति विरचितायां कीर्तिपताकायां
चतुर्थो विलासः सम्पूर्णः।।

छाया-

खोदाकाय क्षेत्रं रणकातरा दत्तवन्तः।

साहसं खण्डयन्ति खड्गैः क्षुत्पीडिताः।।

पानीयं स्नानाय न मिलति कामम्।

चषकं गमयितं करं दत्वा सेवकैः।। 69।।

कुब्जान् सम्भरति अपलायितो जनो वार्ताभिः।
....।। 70।।
गायं गायं गायन्ति यशः साचारम्।
नपुंसकः अकार्यकः वार्तया न्यक्करोति।।
मखदूमः कण्ठस्थान् मन्त्रान् सुभाषते।
हिन्दूवणिजः तस्य भारं रक्षन्ति।। 71।।
एवं जित्वा संग्रामं, राजा शिवसिंहः परावर्त्तितः।
धनं सम्भार्य, पितृकुलवैरिणम् उद्धृतवान्।।
कुसुमानि अवर्षयत् सुरलोकः, दर्पेण अनीतवान् तत्र चन्दनम्।
राजतिलकं शुभं प्राप्नोद्, गरुड़नारायण-नन्दनः।।
रात्रपुत्रेभ्यो दत्तवान् धनं, रत्न-दानेन बलि-कर्णौ जितवान्।
निजखड्गधारेण उत्पाद्य, नवीनां राजलक्ष्मीं कृतवान्।। 72।।

इति मिथिला महीमण्डलान्तर्गत मुधवनीमण्डलावयव दीपग्रामवास्तव्य पं. गंगानाथ झा शर्मात्मज-विद्यावाचस्पति (डॉ.) शशिनाथ झाशर्मकृता कीर्त्तिपताका-संस्कृतच्छाया समाप्ता।। शुभमस्तु।।

हिन्दी- युद्ध से भागे हुए सैनिकों ने खुदा के लिए मैदान छोड़ दिया और खगे हुए (अभाव ग्रस्त) भुखमरे दरिद्र यवन अपने साहस को तोड़ रहे थे। उन्हें नहाने के लिए उचित मात्रा में पानी नहीं मिल रहा था। गुलाम (नौकरों) ने पानी के शुल्क देने में अपना प्याला ही गमा दिया।। 69 ।।

कातीन (जो भाग न सके) लोग, कुब्जों (हथकट्टों या अंगभंगों) को बातोंसे सम्भाल रहे थे। ...।। 70।।

यश गाने वाले बार बार राजगुण (साचार) गाने लगे, जिसे नामर्द कातिन (जो भाग न सके) अपनी बातों से तिरस्कृत करते थे। मख्दूम (धर्मप्रवक्ता) अभ्यस्त मन्त्र कहने लगे और हिन्दू बनियों ने उनके निर्वाह का भार रख लिया।। 71।।

इस प्रकार रण में जीतकर, राजा शिवसिंह लौट आए। अपने साज सामानों, दौलतों को सम्हाला और अपने पिता के कुल के शत्रुओं को सफाया कर

दिया (पीढ़ियों से आते हुए शत्रुओं का समूल नाश कर दिया)। देवलोक ने उन पर फूलों की वर्षा की। स्वाभिमान पूर्वक चन्दन मंगाया गया। राजा गरुड़ नारायण देवसिंह के पुत्र शिवसिंह ने राजतिलक प्राप्त किया। उन्होंने राजपूतों को धन दिया, रत्न के दानों से राजा बलि और दानवीर कर्ण को जीत लिया और अपनी खड्ग की धारा से उपार्जित कर नवीन राजलक्ष्मी को स्थापित किया।। 72।।

इस प्रकार राजा श्री शिवसिंह देव के संग्राम से उत्पन्न यश को सुन्दरीगण प्रत्येक आंगन में तथा प्रत्येक दिशाओं में गा रही हैं। यह उनकी विख्यात कीर्ति कविविद्यापति की वाणी कीर्त्तिपताका बारंबार सज्जनों के मुखकमल में तब तक आती रहे, जब तक सूर्य और चन्द्र रहें।। 73।।

इस प्रकार श्री विद्यापति-विरचित कीर्त्तिपताका में चतुर्थविलास सम्पूर्ण हुआ।।

इसी प्रकार पं० शशिनाथ झाकृत कीर्तिपताका की प्रबोधिनी हिदी व्याख्या समाप्त हुई।

मैथिली- जंग (युद्ध) सँ भागल सैनिक खुदाक लेल मैदान छोड़ि देलक। खगल (अभावग्रस्त) दरिद्र यवन अपन साहस तोड़ि रहल छल। ओतए नहएबाक पानि यथोचित नहि भेटैत छलैक। गुलाम (नोकर) सब पानिक कर (शुल्क) देबामे अपन कूजा (प्याला) गमा देलक।। 69 ।।

कातीन (भगबा मे अक्षम) सब कुब्ज (हथकट्टा वा अंगभंग) सबकें बात सँ सम्हारि रहल छल।। 70 ।।

यशक गान करएवाला राजगुण गाबए लागल, तकरा कातीन (जे भागि नहि सकल) अपन बात सँ धिक्कारए लागल। मखडुम्मा (धर्मप्रवक्ता) अभ्यास कएल मन्त्र बाजए लागल आ हिन्दू बनियाँ सब तकर निर्वाहक भार राखि लेलक।। 71 ।।

एवंप्रकारें संग्राम कें जीति राजा शिवसिंह अपन राजभवन घुरि अएलाह, धनवित राजपाट सम्हारलनि, पिताक कुलक वैरक उद्धार कएलनि (वप्पावैर सधओलनि)। देवतागण फूलक वर्षा कएलनि। स्वाभिमान सँ ओतए श्रीखण्ड चानन आनल गेल। गरुड़नारायणक (देवसिंहक) पुत्र

(शिव सिंह) शुभ राजतिलक प्राप्त कएलनि। ओ राजपूत सबकें धन देलनि, रत्नक दानसँ वलि ओ कर्णकेँ जीति लेलनि (हुनकहु सँ बेसी दानी भेलाह) आ अपन तलवारक धार सँ उत्पन्न (प्राप्त) कए राजलक्ष्मीकेँ नवीन बनाए देलनि।। 72 ।।

एहि तरहें श्री शिवसिंहदेवक संग्राम में प्राप्त भेल यशकें सुन्दर भौंहवाली नारी सब प्रतिनगर, सब दिशा ओ सब आङनमे गबैत अछि। विद्यापतिक वाणी स्वरूपा ई कीर्तिपताका पुस्तक सुविख्यात भए यावत् धरि चन्द्र-सूर्य रहथि तावत् धरि सज्जन सभक मुखकमलमे विराजमान रहओ।। 73।।

इति श्रीविद्यापतिक बनाओल कीर्तिपताका मे
चारिम विलास सम्पूर्ण भेल।

इति मिथिलादेशस्थित मधुवनी जिलाक दीपगामक निवासी
वैदिक पं० गंगानाथ झाक पुत्र विद्यावाचस्पति
पं० श्री शशिनाथ झाक कएल 'प्रबोधिनी'
मैथिली व्याख्या सँ मण्डित कीर्तिपताका
सम्पूर्ण भेल।

***

परिशिष्ट

(1)

विद्यापति के अवहट्ठ गीत

(1) शिवसिंह का युद्ध

दूर दुग्गम दमसि भञ्जेओ, गाढ़ गढ़ गूढ़ीअ गञ्जेओ,
पातिसाह असीम सीमा, समर दरसेओ रे।
ढोल तबल निसान सद्दहि, भेरि काहल संख नद्दहि,
तीनि भुअन निकेत, केतकि सान भरिओ रे॥ 1॥
कोटि वीर पयान चलिओ, राअ मध्ये राअ गरुओ,
तरणि-तेअ-तुला धरा, परताप गहिओ रे।
मेरु कनक सुमेरु कम्पिअ, धरणि पूरिअ गगन झम्पिअ,
हाथि तुरअ पदाति पअ भर, कमन सहिओ रे॥ 2॥
तरल तर तरवारि रङ्गे, विज्जुदाम छटा तरङ्गे,
घोर घन-संघात वारिस-काल दरसेओ रे।
तुरअ कोटी चापि चूरिअ, चारि दिस चौ-विदिस पूरिअ,
विसम सार असार धारा, धरनि भरिओ रे॥ 3॥
अन्धकूअ कबन्ध लाइअ, फेरवी फफ्फरिअ गाइअ,
रुहिर मत्त परेत भूअ-बेआल चलिओ रे।
पार भइ परिपन्थि खण्डिअ भूमिमण्डल मुण्डे मण्डिअ,
चारु चन्द कलेव्व कित्ति, सुकेत तुलिओ रे॥ 4॥
राम-रूपे सुधम्म दिक्खिअ, दानदप्पे दधीचि सिक्खिअ,
युद्ध कौतुक सुकवि नवजयदेव भनिओ रे।

देविसिंह नरेन्द्र नन्दन, सत्तु-नरबइ-कुलनिकन्दन,
सिंह सम सिवसिंह, गुनक निधान गनिओ रे॥ 5॥

हिन्दी अनुवाद-

दूर से ही दलमलित करते हुए (यवन सैन्य) दुर्ग को भंग करने लगा, अतिशय सुरक्षित स्थान को कुचल कर गञ्जित करने लगा। बादशाह अपनी अपरिमित सेनाके साथ सीमा पर आकर युद्ध क्षेत्र में दीख पड़ रहा है। ढोल मृदङ्ग और नगाड़े के शब्दों से तथा भेरी (रणवाद्य) धुतहू और शंख की आवाज से तीनों लोकों के भवनों में कितने ही (केतकि) शब्द (सान) भर रहे हैं।। 1।।

करोड़ों वीर प्रस्थान कर चुके हैं। राजाओं के बीच में राजा शिवसिंह श्रेष्ठ बने हैं और पृथ्वी उनके प्रताप को सूर्य के तेज के समान ग्रहण कर रही है। मेरु पर्वत के समान सोना से पृथ्वी को भर दिये जिससे सुमेरु पर्वत काँप रहा है और आकाश झँप रहा है। हाथी, घोड़े और पैदल सैनिक के पैरों के भार को कौन सह सकता है ?।। 2।।

अत्यन्त चञ्चल छलकते तलवारों के रङ्ग (कान्ति, चमक) से बिजली की रेखा की छटा तरंगित होने के कारण घरघोर मेघ-समूह-लगा वर्षाकाल ही दिखाई दे रहा है। करोड़ों घोड़े कुचलकर (सैनिकों को) चूर्ण कर रहे हैं तथा चारों दिशाओं एवं विदिशाओं (कोणों) को भर देते हैं, उन्मत्त (विषमदशास्थित) हाथियों के मदजल (सार) वृष्टि (अछाड़) की धारा से पृथ्वी भर गयी है।। 3।।

कटे धर (कबन्ध = शरीरार्ध) को अन्धकूप (गहरे गड्ढ़े में) लाकर सियारनी हुआ-हुआ स्वरमे गा रही है और शोणित पीकर मत्त प्रेत, भूत, वेताल आदि टहल रहे हैं। शत्रुओं (परिपन्थी) को खण्डित कर भूमिमण्डल को नरमुण्डों से सजा कर (राजशिवसिंह रणभूमि को) पार कर गये और सुन्दर चन्द्रकला के समान उनकी कीर्त्ति-पताका फहराने लगी (तुलिअ=हुआ)।। 4 ।।

राम के समान अपने धर्म में दीक्षित (अडिग) रहे एवं दान के दर्प से दधीचि (ऋषि) के समान शिक्षित (निपुण) रहे, ऐसे शिवसिंह के युद्ध-कौतुक को सुकवि नवजयदेव विद्यापति वर्णित कर रहे हैं। राजा देवसिंह के पुत्र, शत्रु राजाओं के वंश को नष्ट करने वाले, सिंहतुल्य पराक्रमी शिवसिंह गुणों के भण्डार में परिगणित हैं।। 5।।

मैथिली- सुदूर दुर्गम सुरक्षित स्थान पर घोर आवाज सहित पददलित करैत ओकरा भञ्जित (तहस-नहस) कए देलक। गहन गढ़ (किला) कें कुचलित कए गञ्जित कए देलक। एना बादशाहक असीम (अपरिमित सेना समरभूमिक सीमा पर देखल गेल। ढोल, मृदंग ओ नगाड़ा बजओलासँ तथा भेरी (रणवाद्य), धुतहू ओ शंख फुकला सँ तेज आबाज भेलासँ तीनू भुवनरूपी घरमे कतेको शब्द भरि रहल अछि।

दुर्गम=कठिनतासँ जएबा योग्य। दमसि = दम्दम् पएरक आवाज कए पहुँचि कए। गाढ़ = गहन। गढ़= किला। गूढ़ीय = गुप्त कए, दबाए। गञ्जित = तिरस्कृत, मर्दित। सद्दहि = शब्दसँ। नद्दहि = तेजशब्दसँ। निकेत = घर। केतकि = कतेको। सान = स्वन = शब्द।। 1।।

करोड़ो वीर प्रस्थान कए चलि देने छथि। राजा सभक बीच राजा शिव सिंह श्रेष्ठ छथि। सूर्यक तेज सँ तुल्य हुनक प्रताप केँ पृथ्वी प्राप्त कए रहल अछि। सोनाक सुमेरु पर्वत बनाए पृथ्वी केँ भरि देलनि जाहिसँ सुमेरु पर्वत काँपए लागल ओ आकाश झँपाए लागल। हाथी, घोड़ा ओ पैदल सैनिकक पएरक भार केँ के सहि सकैछ ?

गरुअ = गुरु = श्रेष्ठ। तरणि = सूर्य। मेरु कनक = मेरु पर्वतक समान सोना। कमन = के।। 2।।

अत्यन्त चमचमाइत छलकैत तलवारक चमक बिजलीक रेखाक तरङ्ग थिक, जाहिसँ घनघोर मेघसमूहसँ युक्त वर्षाकाल देखि पड़ि रहल अछि। करोड़ो घोड़ा सेना सबकेँ चापि (ऊपर सँ कुचलि) चूर्ण कएलक आ चारू दिशा आ कोण सबकेँ अपन उपस्थिति सँ भरि देलक। विषमादशास्थित = उन्मत्त हाथी सभक मदजलक अछाड़ (वृष्टि)क धारासँ पृथ्वी भरि गेल। तरवारि रंग= तलवारक चमक।। 3।।

अन्हार कूप सन खत्तामे कबन्ध (मनुष्यक धर)केँ आनि सियारनी फफ्फर (हुआ-हुवा) शब्द करैत गाबि रहल अछि ओ शोणित पीबि मत्त प्रेत, भूत आ वेताल चलि रहल अछि। शत्रुकेँ खिहारैत नदी वा सागरोक पार भए ओकरा खण्ड-खण्ड कए देलनि, मुण्ड सँ भूमण्डल केँ मण्डित (शोभित) कए देलनि। एहि तरहेँ सुन्दर चन्द्रमाक कला सन शिव सिंहक

कीर्तिपताका फहराए लागल।

कबन्ध = मनुष्यक धर। रुहिर = रुधिर = शोणित। परिपन्थी = शत्रु। कलेव = कलाक समान। सुकेत = सुकेतु = सुन्दर पताका। तुलिओ = तुलित = उपस्थित भेल।। 4।।

रामक रूपमे सुधर्ममे दीक्षित (निपुण) रहलाह, दान करबाक गर्वमे दीधीचि ऋषि स्वरूप शिक्षित (पटु) भेलाह। एहि राजा शिवसिंहक युद्ध कौशलकेँ सुकवि नव जयदेव विद्यापति वर्णित कएलनि। राजा देवसिंहक पुत्र, शत्रुराजाक कुलकेँ उखाड़निहार सिंहक समान वीर राजा शिवसिंह केँ गुणक निधि रूपेँ गणना कएल जाइत अछि।। 5।।

स

2. देवसिंह का स्वर्गवास एवं शिवसिंह का राज्यारोहण

अनल-रन्ध्र-कर लक्खण-नरबइ सक समुद्द-कर अगिनि-ससी।
चैतकारि छठि जेठा मिलिओ, वार बेहप्फइ जाउ लसी।। 1।।
देवसिंह जं पुहुमी छड्डिअ, अद्धासन सुरराअ सरू।
दुहु सुरतान नीन्दे अब सोअउ, तपन-हीन जग तिमिर भरू।। 2।।
देखहु ओ पुहमी के राजा, पौरुस माझ पुन्न बलिओ।
सतबले गङ्गा मिलिअ कलेवर, देवसिंह सुरपुर चलिओ।। 3।।
एक दिस जवन सदल-बल चलिओ, अओका दिस जमराअ चरू।
दुहुओ दलहि मनोरथ पूरिओ, गरुअ दाप सिवसिंह करू।। 4।।
सुरतरु-कुसुम-वासे दिस पूरिओ, दुन्दुहि सुन्दर साद धरू।
वीर छत्त देखन को कारण, सुरगन सोभइ गगन भरू।। 5।।
आरम्भिअ अन्तेट्ठि-महामख, राजसूअ असमेध जहा।
पण्डित-घर आचार वखानिअ, जाचक काँ घर दान-कहा।। 6।।
विज्जाबइ कइवर एहु गाबए, मानव मन आनन्द भओ।
सिंहासन सिवसिंह बइट्ठउ, उच्छवे वैरस बिसरि गओ।। 7।।

राजा लक्ष्मण सेन का संवत् 293 तथा शाके 1324 (तदनुसार 1402 ई.) चैत कृष्ण षष्ठी तिथि को ज्येष्ठा नक्षत्र मिल गया और बृहस्पति दिन भी प्राप्त हुआ।। 1।।

(विद्यापति ने शाके 1324 को लक्षण संवत् 293 कहकर स्पष्ट कर दिया है कि लक्ष्मण संवत् का आरम्भ शाके 1039, तदनुसार 1109 ई. मे हुआ था।)

उस समय जब राजा देवसिंह ने पृथ्वी को छोड़ दिया तो उनके स्वर्ग पहुँचने पर देवराज इन्द्र अपने आधे आसन से खिसक गये। अब यहाँ दोनों सुल्तान (बंगाल एवं जौनपुर के) नीन्द से सोवे, क्योंकि देवसिंह रूप सूर्य से हीन इस संसार में अन्धकार भर जाने से रात हो गयी है।। 2।।

पृथ्वी के राजा लोग देखें कि पौरुष = पुरुषार्थ के मध्य पुण्य ही बलवान् होता है, सत्य के बल से गङ्गा ही देह में मिलने आई और देवसिंह स्वर्ग चले गये।। 3।।

उस समय एक तरफ से यवन सदल-बल आ धमका और दूसरे तरफ से यमराज ने आक्रमण कर दिया। पर दोनों दलों का मनोरथ पूर्ण हुआ, क्योंकि शिवसिंह ने अपना महान् दर्प प्रस्तुत किया। (यवन पर विजय सैन्य द्वारा एवं यमराज पर विजय अपने पिता को गङ्गालाभ कराकर उस समय आये यमदूतों को मुखमलिन कराने से प्राप्त हुआ)।। 4।।

कल्प वृक्ष के फूल के सुगन्ध (वास) से दिशाओं को भर दिया गया, बाजाओं से सुन्दर शब्द उपस्थित किया गया। शिवसिंह के वीरोचित छत्रधारण को देखने के लिए देवगण आकाश को भर दिये।। 5।।

(शिवसिंह ने अपने पिता का) अन्त्येष्टि (श्राद्ध)- महायज्ञ आरम्भ किया, वह लगता था जैसे (जहा=यथा) राजसूय यज्ञ या अश्वमेध यज्ञ हो (क्योंकि वहाँ महीनों तक जयबारी भोज चलता रहा)। पण्डितों के घर में उनके आचार विचार की शुद्धता की व्याख्या होती थी, जबकि याचकों (मांगने वालों) के घर में उनकी दान कथा (धान की प्रशंसा) चल रही थी।। 6।।

विद्यापति इसे गा रहे हैं। सभी लोगों का मन आनन्दित हो गया है।

शिवसिंह सिंहासन पर बैठ गये और इस उत्सव के कारण देवसिंह के स्वर्गवास-प्रयुक्त वैरस्य (उदासी) को लोगों ने भुला दिया।। 7।।

मैथिली- लक्ष्मण संवत् 293 तथा शके 1324, चैत अन्हरिया षष्ठी तिथि, ज्येष्ठा नक्षत्र, बृहस्पति दिन उपस्थित भेल। अनल = अग्नि = 3, रन्ध्र = छिद्र = शरीरमे छिद्र-9, कर = हाथ = 2, अंक दहिना दिससँ वामा दिस लिखल जाइछ, तेँ 293 ल०सं०। समुद्र = 4, कर = 2, अग्नि = 3, शशि = 1, तदनुसार 1324।

विद्यापति शाके ओ लक्ष्मण संवत् एक ठाम लिखि स्पष्ट कए देलनि जे लक्ष्मण संवत् 1109 ई.मे प्रारम्भ भेल। तदनुसार 1109 + ल.सं. 293 = 1402 ई.मे देवसिंहक मृत्यु ओ शिवसिंहक राज्यारोहण भेल छल।। 1।।

जखन देवसिंह पृथ्वीकेँ छोड़ि देलनि त स्वर्गमे देवराज इन्द्र हुनका लेल अपन आधा आसनसँ ससरि गेलाह। आब दुनू सुलतान (बंगाल एवं जौनपुरक) गाढ़ नीनमे सुतथु, किएक तँ देवसिंहरूपी सूर्यसँ हीन एहि संसरमे अन्हार भरि गेलासँ राति भए गेल अछि। अर्थात् देवसिंहक डरें हुनका सबकें नीन नहि होइ छलनि। जं = जखन। पुहमी = पृथ्वी। तपन = सूर्य। तिमिर = अन्हार।। 2।।

पृथ्वीक राजा सब देखथु जे पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) मे पुण्य (धर्म) बलवान् होइत अछि, किएक त सत्यक बलसँ गङ्गा देहमे मिलि गेलथिन आ देवसिंह स्वर्ग चल गेलाह।। 3।।

तखन एक दिससँ यवन (बंगालक सुलतान) सदल-बल चलल (आक्रमण कएलक) आ दोसर दिससँ यमराज चललाह। ओहि दुनू दलक मनोरथ पुरल, किएक तँ राजा शिवसिंह अपन महान् दर्प (गर्वयुक्त आक्रमण) कएलनि।

यवन पर विजय सैन्यद्वारा एवं यमराज पर विजय पिताकेँ गंगालाभ कराए, ओहि समय आएल यमदूतक मुख मलिन कएलासँ प्राप्त भेल।। 4।।

कल्पवृक्षक फूलक सुगन्ध सँ दिशा सभ कें भरि देलनि आ बाजा सभक सुन्दर शब्द उपस्थित कएलनि। शिव सिंहक वीरोचित छत्रधारण

(राज्यारोहण)कें देखबाक लेल देवगण शोभित भए आकाशकें भरि देलनि।

वास = सुगन्ध। दुन्दुहि = बाजा। साद = शब्द।। 5।।

अन्त्येष्टि = श्राद्ध महायज्ञ कें आरम्भ कएलनि जेना राजसूय ओ अवश्वमेध प्रारम्भ भेल रहए। एहि यज्ञक विषयमे पण्डित लोकनिक घरमे आचारक (शास्त्रविधि पालनक) व्याख्यान होमए लागल आ याचक (मँगनिहार) सभक घरमे दानक कथा (एहन दान कतहु ने पाओल) चलए लागल।

महामख = पैघ यज्ञ। जहा = यथा। कहा = कथा।। 6।।

कविवर विद्यापति एकरा गबैत छथि। सकलमानवक मनमे एखन आनन्द भरि गेल अछि, शिवसिंह राजसिंहासन पर बैसलाह। एहि उत्सवसँ देवसिंहक निधनक विरसता (उदासी) बिसरि गेल।। 7।।

***

परिशिष्ट-2

ग्रन्थों में प्रयुक्त छन्दों एवं गद्यों की सूची

(निर्दिष्ट संख्या ग्रन्थ एवं पद्यांक का सूचक है। भीषम का काव्य = 1, की.गा. = 2, की.प. = 3)

1. अनुष्टुप्- 1-2 (संस्कृत)। 2-30 (संस्कृत)।
2. आर्या- 1-3। 2-3।
3. उपजाति- 2-14 (संस्कृत)।
4. गद्य- 2-25 एवं 31 (संस्कृत)। 3-20-24, 50, 52, 57, 65
5. चञ्चला- 3-1, 1, 3, 4।
7. चौपाइ- 1, 6। 2-3, 6, 7, 8, 9। 3- 36, 37, 38, 39, 40, 41, 42, 43, 44, 45, 46, 47।
8. जयकरी- 2-27, 28। 3-6 से 13, 22, 23, 60, 61, 62, 63, 64, 65।
9. तोटक 2-36 से 39। 3-15 से 18, 29 से 34।
10. दोहा- 1-4, 5। 2-2, 4, 21। 3-49, 51, 64, 66।
11. पञ्चचामर (नाराच)-2-17, 18।
12. मालिनी- 2-16 (संस्कृत)।
13. रड्डा- 2-5, 11, 12, 32 से 35। 3-14, 21, 26, 27, 28।
14. वसन्ततिलका- 1-1 (संस्कृत)।
15. शार्दूलविक्रीडित- 3-73 (संस्कृत)।
16. शालिनी- 3-67 से 71।

17. षट्पद- 2-10, 19, 20, 25, 29। 3-5, 19, 25, 35, 48, 58, 59, 62, 72।
18. स्रग्धरा- 2-13 (संस्कृत)।
19. स्रग्विणी- 3-53 से 56।
20. हरिगीतिका- 2-22 से 25

***

परिशिष्ट–3

प्रस्तुत संस्करण में महत्त्वपूर्ण पाठ संशोधन

	पूर्वपाठ	संशोधित पाठ	अनुच्छेद
कीर्तिगाथा–	सत्तेओ	सत्तुओ	5
	विनु अपराध	नित्त सराध	6
	बम्भण उच्च	बम्भण तुट्‌ठ	6
	कुरुम कोब	कुरुम कोर	10
	किअ तकि मारय	किअउ कितारथ	32
कीर्तिपताका–	तथि वेअ	ओत्थरिअ	5
	आली	आनी	13
	चिरनिद्दाए	विरनी ददाए	13
	उडकिअ	उट्‌ठिअ	17
	जनि हनिअ	घरहनिअ	19
	वेग मन्द	वेग बाढ़	20
	वैरि सत्त	बेबि सत्तु	21
	करह सत्तमअ	अह सूरत्तन	21
	एक सुवर्ण्ण न पेन्ह	एहु सूरत्तन अह्म	21
	विसरिअ	विमरिस	22
	बहुत	संशोधन	24
	बहुत	संशोधन	25

तुरिअ	इसर	26
सोल्लह	सोअर	26
खान	थान	47
बंगाल	बंकान	48
निक्कारना	णं कालना	54
लाबिअ भूचलए	परिओघ लए	56
अन्त पेम	अतप्पेन	58
मारि खोद	धरणि	60
धारि	हाट	62
कासुन्दि	कासुति	64
छाग ककरकराइ लाब बाहु धरि	छागर बाकर राजतिलक शुभ	72
राज ओन्हि	राउत्तन्हि	72

***

परिशिष्ट-4

कीर्त्तिपताका में प्रयुक्त फारसी शब्द

फारसी शब्द	की.प. के अनुच्छेद	अर्थ
उमारा (उमरा)	68	धनीलोग
काइर (कायर)	59, 66	डरपोक
कादीन (कातिन)	70, 71	कहीं न गया हुआ
कूज	70	कुब्ज, लुल्हा
कूजा	65, 69	प्याला
[1]खान (खाँ)	2, 26, 31, 35, 46	साहब, बहुत यवनों के प्रधान
खोजा (ख्वाजा)	67	मालिक, अधिपति (एक पदवी)
खोदाए (खुदा)	69	मुसलमानों की देवता
गुलाम	69	नौकर
घाइल्ल (घायल)	5, 10	आहत, जिरो आघात लगा हो
जंगालिदी (जंग आलूद)	69	मोर्चा खाया हुआ
तुलुक (तुर्क)	66	तुर्क, यवन
देउला (दौलत)	62	सम्पत्ति
नदीदेञो (नदीद)	69	भूख से मरता हुआ
नंजा	63	बर्छी
[2]पातिसाह (पात्साह)	50	प्रान्तीय शासक

पैरास्तगी	68	सजावट, साज्जिता को
बन्दा	68	सेवक
बीबी	68	पत्नी, राजपत्नी
बूंद	68	बिन्दु
[3]मख्दूम	71	मुसलमानों का धर्मोपदेशक
मलिक्का (मलिक)	67	मालिक, अधिपति
मायर	72	उपकरण, धनदौलत
मीरा[4]	67	प्रधान यवन
मैदान	69	क्षेत्र
यादास्त (याद दाश्त)	71	स्मरण किया हुआ
शराब	68	मदिरा
शीशाख (शीशाक)	67	सालभपर की बकरी
सलेबा (सलीबी)	67	धर्मगुरु
[5]साहिबान	1	साहबलोग
[6]सुरुतान (सुल्तान)	11, 13	राज्यस्तर का मुसलमान राजा
हदब	66	स्तब्ध।

----

1. बहूनां यवनानां यः प्रभु खानः स कथ्यते।
   नबाबश्च स एवोक्तो मीयाँ स्याद् यवनोत्तमे।।
   पारसीकप्रकाश, कोशप्रकरणे- 138
2. पातसाहो नृपे प्रोक्तः, सुलतानस्ततोऽधिके।
   शाहन्शाहो नृपाधीशे वजीरो मन्त्रिणि स्मृतः।।
   पारसीकप्रकाशः, कोश- 134
3. कर्मोपदेष्टा सर्वेषां शास्त्रमार्गानुसारतः।
   स्वयं ज्ञानेन सम्पन्नो मखदूमः स कथ्यते।।
   पारसीकप्रकाशः कोश, 140।

4. मीर: स्यान्मुख्य-मुद्गले-पा.प्र.को.- 137
5. 'आफ्ताबादेरान् विवक्षया बहुवचनस्य'-पारसीक-प्रकाश: -विहारिकृष्णदासकृत संस्कृत-भाषायां फारसीभाषा-व्याकरणम्-व्याकरणप्रकरणे, सूत्रसंख्या-45 तमी। कर्त्ता के बहुवचन में आफ्ताब (सूर्य) आदि शब्दों से आन् प्रत्यय भी लगता है, जैसे साहिब-साहिबान्।
6. द्रष्टव्य पूर्व टिप्पणी सं.-2

***

परिशिष्ट-5

कीर्त्तिपताका में प्रयुक्त वर्णरत्नाकर के कुछ शब्द

शब्द	पद्यसंख्या	अर्थ
अओकी	28-20 कीर्त्तिगाथा	(अवरक) दूसरी
अक्खउरि (अखउलि)	31 की.प.	अखौरी, आक्षपटलिक (क्रीड़ाध्यक्ष, कायस्थ की उपाधि)
अगहरिआ (अगहरा)	61 की.प.	अग्रहारक (राजसेवक)
अत्थान	(11 कीर्त्तिगाथा)	आस्थान, आमदरबार का स्थान
कुमर (कूमर)	28, 398, 40 की.प.	राजकुमार
खाति (खातिमान)	33 की.प.	राजपूत-विशेष
गयघल (गजघटा)	47, 50 की.प.	हाथी का झुण्ड
चउदन्त (चौदन्त)	50 की.प.	हाथी
चन्देल	30 की.प.	राजपूत का एक वंश
चाहुआन (चउहान)	41 की.प.	चौहान राजपूत
चोरगाह	29 की.प.	चामरग्राह (चँवर डुलाने वला)
नगाढ़ि (नगारि, लगारि)	27 की.प.	नागा, लगारी (लग्नशील वीर)
पसाहि	(11 कीर्त्तिगाथा)	प्रसाधित (सञ्जित) कर
पाइक	61 की.प.	पैदल सैनिक
पाखर	63 की.प.	दण्डायुध (प्रक्षेपास्त्र)

बउराअ (बउरिआ)	28 की.प.	राजोपजीवक
विबन्ध	(कीर्तिगाथा) 32	विशिष्ट कामासन
भण्डारि	41 की.प.	भाण्डागारिक, भण्डारपाल
मल्ल	30 की.प.	राजसेवक, पहलवान
महथ	30 की.प.	महत्तक, धनाढ्य राजसेवक
मान	(कीर्त्तिगाथा)	संगीत मात्रा
मुदहथ (मुद्दहत्थ)	40, 42, 43 की.प.	मुद्राहस्तक, खजाञ्ची
रट्ठउर (रट्ठउल)	33, 41 की.प.	राठौर राजपूत वंश
राउत (राउत्त)	34, 44 की.प.	राजपुत्र, एक पदाधिकारी
राउतपति (रौतपति)	44 की.प.	राजपुत्रों के नायक
राजवल्लभ	42 की.प.	राजा का प्रियपात्र
साचार	71 की.प.	नायक के गुण
सुरबइ (सुरबए)	34 सुराधिकारी (मद्य पर कर लेने वाला) सूड़ी	
सुरुकि	25 की.प.	राजपूत का एक वंश
सव्वा अओसर (सर्वावसर)	(11 कीर्त्तिगाथा)	आम दरबार

***

परिशिष्ट-6

कीर्त्तिपताका में वर्णरत्नाकर से समान पंक्ति

की.प.	**वर्णरत्नाकर**
1. राअ बइठउ जखने अत्थान। सव्वा आओरसर हुअउ। (की.गा.-11)	राजा काँ सर्वावसर भेलाँ आस्थान कइसन देखु। पृ.- 28
2. णं समुद्द-जल उच्छलिअ, मूल सुमेरु मलक्क। (की.प.-14)	सैन्य के भरे पृथ्वी कापि गउ, मेरु टरि गउ, सातओ समुद्र उच्छलित भए गउ। पृ.- 54
3. रत्ते मत्ति डाकिनी पलापसंग नाच भूअ। की.प.- 4	रत्तक मत्ति पिशाचक स्त्री, तकर नृत्यते भीषण। पृ.- 72

***

परिशिष्ट–7

कीर्त्तिपताका में कीर्त्तिलता से समान पंक्ति

की.प.	**कीर्त्तिलता**
1. दाने दलिअ दारिद्द–2–1 (की.गा.)	दाने दलइ दारिद्द– 1–12
2. वप्पकुल–बेरि उद्धरिअ–3–72 की.प.	वप्पवैर उद्धरञो–2–12 पितृवेरि–उद्धरि– 1–29
3. तेतुली वेला– 3–20 की.प.	तेतुली वेला– 2–7 पहरा दुइ वेरा– 4–43
4. दन्ति दन्ते सुण्डे मार– 3–2 की.प.	गररुअ गरुअ सुण्ड मारि– 4–6
5. अन्त–जाल माल बद्ध गिद्ध उद्ध उड्डि जाइ– 3–4	अरुज्झाल अन्तावली जालबद्धो वसा–वेग बूडंत उड्डन्त गिद्धो–4–42
6. धलफल कम्प चणक्क मुण्ड–3–5	नर कबन्ध धलफलइ–4–44
7. गमन करथि गोहन जानि–3–8	गोहन नहि पाबथि– 4–23
8. चमकि उट्ठिअ एम सुरुतान–3–24	एम कोप्पिअ सुनिअ सुरुतान–3–9
9. पाअ भरहिं पसान चूरिअ–2–11 (की.गा.)	पअभरे पत्थर चूरीआ 2–34
10. कटकाँई जसराज– 3–35	कटकाँई तिरहुत्ति–4–5
11. वद्द वज्ज सज्ज होन्ते–3–1	वाद्य वाजु सेना साजु–4–4
12. पक्खर खग्ग झलक्क–3–14	पक्खरेहि साजि साजि– 4–13

13. सनाह पाखर सेल भाल–3–63	पाखरे पाखरे ठेल्लिकहुँ–4–39
14. ढोल तबल नीसान–3–14 भेरि नीसान काहार कोलाहला–3–54 घन बाज्जिअ रणतूल–3–5	भेरी काहल ढोल तबल–रणतूरा बज्जइ– 4–42
15. चापि तुरअ तरवारि तोरि–3–26	तोरि तुरअ असवार–4–44
16. उफरि उफरि फेरवी पमत्त मांस खाइ खाइ– 3–4	रक्तक रांगल माथ उफरि फेरवी फोडि खा– 4–54
17. रुहिर नदी–3–5	रुहिर तरङ्गिणि– 4–54
18. हरिश्चन्द नल राम राहव–2–12 (की.गा.) रामक रीति पूरे धरलि–3–10	हरिश्चन्द्रक कथा, नलक व्यवस्था, रामदेवक रीति–3–28
19. कुन्द कुसुम संकास जस–3–49	कुन्द कुसुम संकास जस– 1–24

***

परिशिष्ट-8

कीर्त्तिपताका में चर्चित ऐतिहासिक व्यक्ति

1. अक्खउरी इसर-3-31- आक्षपटलिक (खेलमन्त्री) ईश्वर नामक कायस्थ।
2. इसर भानु- 29-ईश्वर भानु, एक वीर।
3. ईसर- 26-ईश्वर, शिवसिंह का एक वीर सैनिक।
4. उजञोन-27-उज्जैन वंश के राजपूत।
5. उदयसिंघ-38-शिवसिंह का चाचा। इनके पुत्र प्रताप ने युद्ध किया था।
6. कमलाकर-43-एक योद्धा।
7. कविदास-47-शिवसिंह का एक सेनाध्यक्ष।
8. कारी चाहुआन-41-कारी चौहान, एक वीर राजपूत।
9. कुमरपाल राउत-44 एक वीर योद्धा। राउत गोपजाति का उपाधि।
10. कुमर-28-राजकुल का वीर राजकुमार।
11. केदार दास-34- एक योद्धा, कायस्थ।
12. केसव कुमर-39-राए भोगीश्वर के पौत्र, गोविन्द राए के पुत्र केशव कुमर, शिवसिंह के चचेरे भाई। ये पांच सोदर थे। ये सभी इस युद्ध में लड़ रहे थे।
13. खग्ग खान-31-खड्ग खान, प्रधान सैनिक।
14. गैडेश-21, 59-गौड (बंगाल) का राजा सुलतान, शिवसिंह का शत्रु।

15. गरुड़नरायन- 58, 72- राजा देवसिंह, शिवसिंह के पिता।

16. गुणञिए मुद्दहत्थ-40-मुद्रास्तक गुणीश्वर, कामेश्वर राए के प्रपौत्र, कुसुमेश्वर के पौत्र, महेश्वर के पुत्र, शिवसिंह के चचेरे भाई ।

17. गोपाल मलिक चन्देलवंश-30-चन्देल नामक राजपूत कुल का एक वीर।

18. जइसिंघ-46-जयसिंह नामक एक योद्धा।

19. जएरूप-47-जयरूप नामक एक योद्धा।

20. जबन-60-यवन, मुसलमान सैनिक, सुलतानी फौज।

21. जसराज देव- 32,35-ये प्रताप के पुत्र थे। देव विशेषण से स्पष्ट है कि वे राजकुल के वरिष्ठ सदस्य थे। जसराज खान नाम से जो इनकी वीरता का उदात्तवर्णन आया है, वैसी वीरता किसी की वर्णित नहीं है।

22. जिबाइ-27-जीवेश्वर नामक वीर।

23. तुरुक-37, 58, 59, 61-तुर्क, यवन।

24. थिति साओत राउत- 34-एक वीर सैनिक।

25. थीरू-49-एक महान् योद्धा।

26. दामोदर-42-शिवसिंह के अंगरक्षक। ये दो भाई एक साथ उपस्थित थे-विद्याधर एवं दामोदर।

27. दुबन खाति-33-दुबन नामक क्षत्रिय। खाति उपाधि वर्णरत्नाकर में देखा जाता है।

28. दुहरन-44-दुखरन नाम का एक वीर।

29. धरमसिंह-27-एक राजसेवक वीर। इनके पुत्र ने संग्राम में भाग लिया था।

30. धीरदेव को तनय–48–धीरदेव के पुत्र इस युद्ध में थे।

31. नरसिंघ–40–ये केशव कुमर के भाइ थे। द्रष्टव्य केशव कुमर शब्द ।

32. निशिपा खां–6–निशिबुद्दीन खाँ, सुलतानी सरदार।

33. पत्ताप उजञोन वंस– 34–उज्जैन कुल के रापपूत प्रताप।

34. पत्तापतनय जसराज–32–द्रष्टव्य जसराजदेव।

35. परताप कुमर–38– उदयसिंह के पुत्र प्रतापसिंह, शिवसिंह के चचेरे भाई ।

36. पल्लिवार धोरनि–32–पलिवार ब्राह्मण कुल की श्रेणी।

37. पहुछाहर–43–प्रभुसागर नाम का वीर।

38. पातिसाह–50–बादशाह, सुलतान।

39. पुन्न मल्ल–30–शिवसिंह का एक प्रधान योद्धा।

40. पृथिवी सिंह–41–पृथ्वी सिंह (पिथाइ), रत्नेश्वर के पुत्र राजपण्डित पिथाइ। कामेश्वर राय के प्रपौत्र, कुसुमेश्वर के पुत्र।

41. बंकान–48–वीरबांका सैनिक।

42. विक्कम खान–26–शिवसिंह के अंगरक्षक विक्रम खाँ।

43. विज्जाहर लेखी–43–हिसाब के लेखाजोखा रखने वाला विद्याधर।

44. विदू–42–दामोदर के भाई विद्याधर।

45. बुद्धिराज–नन्दन–45–बुद्धिराज के पुत्र शिवसिंह।

46. भवाइ–45–भवेश्वर नामक वीर।

47. भाऊ राउत–25–सुरुकिकुल के एक प्रबल वीर।

48. भानु–29–भानु ईसर।

49. भीषू चोरगाह–29–चँवर डुलाने वाला सेवक भीषू।

50. भीषू राजबल्लभ–42–राजा का प्रियपात्र एक पदाधिकारी भीषू।

51. महीसिंह-49-वीर सैनिक।

52. माधव सिंह-शिवसिंह के चचेरे भाइ, द्र. केसव।

53. माहव-47-माधवसिंह....।

54. माहव वसन्त-तनय-45-वसन्त के पुत्र माधव, एक योद्धा।

55. मुदहथ (मुद्दहथ)-40, 42, 42-मुद्राहस्तक, धनाध्यक्ष। गुणीश्वर, सोने, हरपति, ये तीनों कीर्त्तिपताका में मुदहथ कहे गये हैं।

56. मुरारि-कुमर-40-शिवसिंह के चचेरे भाई। द्र. केसव।

57. रट्ठउर कुमर बलवीर-33-राठौर कुल के कुमर बलवीर।

58. रट्ठउर जुअराज-41-राठौर कुल के युवराज।

59. रामसिंह-40-एक महान् वीर।

60. रूपनारायण राए-37-राजा रूपनारायण, कीर्त्तिपताका के नायक शिवसिंह।

61. सकति भण्डारी-41-भण्डारपाल शक्ति नाम का।

62. सरबसिंह- 28-एक राजपुरुष पदाधिकारी।

63. सारंग राउतपति-44-राजपुत्रपति (एक पदाधिकारी) सारंग।

64. सिरिपति-47-श्रीपति नामक योद्धा।

65. सिवसिंघ राए-5,20,21,57,58,59-कीर्त्तिपताका के नायक राजा शिवसिंह।

66. सिवसिंघ बुद्धिराजनन्दन-45-बुद्धिराज के पुत्र शिवसिंह, एक सैनिक।

67. सुगिनी कुल-28-सुगिनी नामक वंश के कुमर रणकार्य में लगे थे।

68. सुजञे-45-सुजय नामक वीर।

69. सुजान खेमराज नन्दन-39-क्षेमराज के पुत्र सुज्ञान।

70. सुरजू सेनापति-24-सूर्य नामक सेनापति। प्रतापसिंह के बड़े लड़के का नाम सूर्य था, पर वे इस युद्ध में नाबलिग ही रहे होंगे।

71. सुरबइ–34–सुरापति, मद्यसम्बन्धी कर वसूलने वाला (सूड़ी) अथवा सुरपति नामक वीर।

72. सुरुकि राउतपति–25–सुरुकि नामक राजपूतों के अधिपति।

73. सुरुतान–11,14,15,19,50,58,60–सुलतान, गौड देश के शासक।

74. सोने मुदहथ–42–मुद्राहस्तक सोने, शिवसिंह के धनाध्यक्ष या मुहर देने वाला।

75. सोमनाथ–27–सोमनाथ नाम का सेनापति।

76. हनुमन्त खान–46–शिवसिंह का प्रभावशाली वीर।

77. हरदत्ततनय हेरम्बनाथ–29–हरदत्त के पुत्र हेरम्बनाथ। एक हरदत्त विद्यापति के वृद्ध प्रपितामह के भाई थे, दूसरे हरदत्त कीर्त्तिलता में हरक भगत कहे गये हैं।

78. हरपति मुदहत्थ–43–मुद्राहस्तक हरपति। विद्यापति के पुत्र का नाम भी हरिपति था, उस समय उनकी आयु उतनी थी या नहीं, यह विचारणीय है। खौआल बजौलीवंश के म.म. रुचिपति के पुत्र।

78. हरिपाल दास–28–एक प्रमुख योद्धा, ये सुअली वंश के कायस्थ थे।

80. हरिहर जयसिंह तनय–31–जयसिंह स्वयं इस युद्ध में लड़ रहे थे, उनके पुत्र हरिहर भी एक योद्धा थे।

81. हेरम्बनाह– 29–हेरम्बनाथ हरदत्त के पुत्र थे।

***

परिशिष्ट-9

मिथिला के राजाओं की सूची

(1097 ई. से 1962 ई.)

1. कर्णाट वंश के क्षत्रिय राजा-

1. नान्य देव (1097 से 1146 ई.)- कर्नाटक प्रदेश से आकर मिथिला में राज्य स्थापित किया।
2. गङ्गदेव (11146 से 1187 ई.)- इसका भाइ मल्लदेव बहुत बड़ा वीर था।
3. नरसिंह देव (1187 से 1225 ई.)- इनके समय में मैथिल वाजपेय सोमयाजि चण्डेश्वराचार्य ने सूर्यसिद्धान्त ज्योतिषग्रन्थ की टीका की थी।
4. रामसिंह देव (1225 से 1276 ई.)- (भुजबलभीम, भीमपराक्रम) इन्हीं के मन्त्री म.म. श्रीकर उपाध्याय ने अमर कोष व्याख्यामृत की तथा म.म. रत्नेश्वर मिश्र ने सरस्वती कठाभरण रत्नदर्पण की रचना की।
5. शक्र (शक्ति) सिंह देव (1276 से 1296 ई.)।
6. हरिसिंह देव (1296 से 1328 ई.)- 15 वर्षों तक नाबालिग रूप में मन्त्री देवादित्य ठाकुर के नियन्त्रण में एवं 1311 ई. से स्वयं राज्य संभाला। वीरेश्वर, गणेश्वर एवं चण्डेश्वर आदि इन्हीं के मन्त्री थे। 1328 ई.मे मुहम्मद तुगक से परास्त होकर नेपाल भाग गये एवं अप्रत्यक्ष रूप में 1340 ई. तक शासन सूत्र संभाला।

2. ओइनवार वंशीय ब्राह्मण राजा-

1. कामेश्वर ठाकुर (1340 से 1342 ई.)- राजधानी ओइनी ग्राम। हरिसिंह देव के गुरु एवं राजपण्डित। 1328 ई. से हरिसिंह देव का प्रतिनिधि शासक। 1340 ई. से मुहम्मद तुगलक द्वारा शासन की मान्यता।

2. भोगीश्वर राए (कामेश्वर का पुत्र) (1342 से 1360 ई.) राजधानी ओइनी ग्राम। तिरहुत के दक्षिणभाग का शासक।

3. भवसिंह (भोगीश्वर का भाई) (1342 से 1370 ई.)- राजधानी भभाम ग्राम। तिरहुत के उत्तरी भाग का शासक। चण्डेश्वर ठाकुर ने इनकी आज्ञा से राजनीतिरत्नाकर की रचना की। इनके धर्माधिकारी जयधर (माधू) बलियास वंश के थे, जिनका पुत्र हरिहर भी देवसिंह एवं कीर्त्तिसिंह का धर्माधिकारी था।

4. गणेश्वर राए (भोगीश्वर का पुत्र) (1360 से 1361 ई.) किसी तुर्क असलान ने इनकी हत्या कर दी।

5. देवसिंह गरुडनारायण (भवसिंह का पुत्र) (1370 से 1402 ई.) । राजधानी देकुली। तिरहुत के मध्यभाग का शासक।

6. कीर्त्तिसिंह (गणेश्वर का पुत्र) 1402 से 1404 ई.) राजधानी ओइनी ग्राम। जौनपुर के इब्राहिम शाह की सहायता से तिरहुत के दक्षणी भाग पर अधिकार किया। विद्यापति कृत कीर्त्तिलता के नायक।

7. अर्जुन राए (देविसंह का भतीजा, त्रिपुरसिंह का पुत्र) (1390 से 1400 ई.)- तिरहुत के उत्तरी भाग का शासक। राजधानी भवाम । कीर्त्तिगाथा का नायक।

8. शिवसिंह रूपानारायण (देवसिंह का पुत्र), (1402 से 1406 ई.) राजधानी गजरथपुर (किलाघाट, दरभंगा)। कीत्तिसिंह के निधन के बाद सम्पूर्ण तिरहुत का शासक। कीर्त्तिपताका का नायक। पिता के जीवन काल में ही राज्यकार्य में पूर्ण हाथ बँटाने के कारण महाराज

कहलाते थे।

9. महारानी लखिमा (शिवसिंह की पत्नी) (1406 से 1418 ई. तक) –शिवसिंह के पलायन के 12 वर्ष बाद सती हो गयी।

10. पद्मसिंह (शिवसिंह का भाई) (1418 से 1420 ई.) राजधानी पदुमा ग्राम।

11. महारानी विश्वास देवी (पद्ममसिंह की पत्नी) (1420 से 1432 ई.)– इसी रानी के आदेश पर विद्यापति ने शैवसर्वस्वसार एवं गंगावाक्यावली की रचना की।

12. नरसिंह दर्पनारायण (भवसिंह के पौत्र एवं हरसिंह के पुत्र) (1432 से 1450 ई.)।

13. धीरसिंह हृदयनारायण (नरसिंह का पुत्र) (1450 से 1452 ई.) । (पिता के जीवन काल में भी महाराज कहलाते थे)।

14. भैरवसिंह हरिनारायण (नरसिंह का द्वितीया पत्रु) 1452 से 1478 ई.)– (पिता एवं भाई के शासन काल में भी महाराज कहलाते थे)। राजधानी, बरुआर ग्राम। इनके धर्माधिकरणिक वर्धमान उपाध्याय ने दण्डविवेक आदि ग्रन्थों की रचना की।

15. रामभद्रसिंह रूपनारायण (भैरव सिंह के पुत्र) (1478 से 1500 ई.)– राजधानी रामभद्रपुर (दरभंगा से पूरब)।

16. लक्ष्मीनाथ सिंह कंसनारायण (रामभद्र का पुत्र)– (1500 से 1526 ई.) राजधानी कंसी। बंगाल के नसरत शाह ने इन्हें परास्त कर राज्यच्युत कर दिया।

3. खण्डवला वंशीय ब्राह्मण राजा–

1. महामहोपाध्याय महेश ठाकुर (1556 से 1569 ई.)–राजधानी भौर (राजग्राम)। मुगल बादशाह अकबर से राज्य पाया। इन्होंने न्याय एवं धर्मशास्त्र के मान्य ग्रन्थों की रचना की।

2. महोपाध्याय गोपाल ठाकुर (1569 से 1581 ई.) महेश ठाकुर के पुत्र।

3. म.म. शुभंकर ठाकुर (1581 से 1617 ई.)- (महेश ठाकुर के पुत्र) राजधानी भौरा गढ़ी। तिथिद्वैधग्रन्थकार।

4. पुरुषोत्तम ठाकुर (शुभंकर ठाकुर का पुत्र) (1617 से 1641 ई.)।

5. सुन्दर ठाकुर (शुभंकर ठाकुर का पुत्र) (1641 से 1668 ई.) ।

6. महिनाथ ठाकुर (सुन्दर ठाकुर का पुत्र) (1668 से 1690 ई.) ।

7. नरपति ठाकुर (सुन्दर ठाकुर का पुत्र) (1690 से 1700)। इन्हीं की आज्ञा से मैथिल लोचन कवि ने रागतरंगिणी की रचना की।

8. राघव सिंह (नरपति के पुत्र) (1700 से 1739 ई.)।

9. विष्णु सिंह (राघव के पुत्र) (1739 से 1743 ई.)।

10. नरेन्द्र सिंह (राघव के पुत्र) (1743 से 1770 ई.)। कन्दर्पीघाट (झंझारपुर) के युद्ध में विजयी। मैथिली साहित्य के प्रबल पोषक थे। रमापति, कविलाल, मनबोध आदि कवियों के आश्रयदाता।

11. महाराज प्रताप सिंह (शुभंकर ठाकुर से छठी पीढ़ी में उत्पन्न, यथा- शुभंकर-नारायण-लाला-गुणानन्द-एकनाथ-प्रताप। राजधानी झंझारपुर। (1770 से 1785 ई.)

12. महाराज माधव सिंह (प्रतापसिंह का भाई) (1785 से 1807 ई.)। राजधानी दरभंगा। दरभंगी खाँ से 85 बीघा जमीन खरीद कर दरभंगा में राजधानी बनायी।

13. महाराज छत्रसिंह (माधवसिंह के पुत्र) (1807 से 1839 ई.)।

14. महाराज रुद्रसिंह (छत्रसिंह के पुत्र) (1839 से 1850 ई.)।

15. महाराज महेश्वर सिंह (रुद्रसिंह के पुत्र) (1850 से 1860 ई.) ।

16. महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह (महेश्वर सिंह के पुत्र) (1860 से 1880 ई. तक नाबालिग) (1880 से 1889 ई. गद्दीनशीन)।

17. महाराजाधिराज रामेश्वर सिंह (महेश्वर सिंह के पुत्र), (1898 से 1929 ई.)।

18. महाराजाधिराज डा. सर कामेश्वर सिंह (रमेश्वर सिंह के पुत्र) (1929 से 1950 ई.), मृत्यु- 1962 ई.।

इन्हीं के नाम पर दरभंगा में संस्कृत विश्वविद्यालय विराजमान है।

***

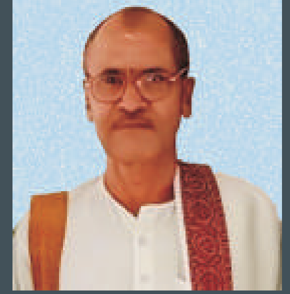
कवि विद्यापतिठाकुरकृत कीर्तिगाथा एवं कीर्तिपताका

(विशुद्ध मूलग्रन्थ, संस्कृत छायानुवाद एवं हिन्दी-मैथिली व्याख्या)

सम्पादक- डॉ० शशिनाथ झा

विद्यापतिकृत कीर्तिपताका का एकमात्र हस्तलेख मिथिलाक्षर में लिखित तालपत्र नेपाल राजकीय हस्तलेखागार, काठमाण्डू में है, जिसमें तीन ग्रन्थ- भीषम कविकृत एक संस्कृत-अवहट्ठ प्रबन्धकाव्य, नवजयदेव कवि विद्यापतिकृत संस्कृत-अवहट्ठकाव्य कीर्तिगाथा तथा विद्यापतिकृत कीर्तिपताका हैं। कीर्तिपताका के हस्तलेख के सम्पादन कार्य को पं. खुद्दी झा, डा. उमेश मिश्र, डा. वीरेन्द्र श्रीवास्तव, डा. शशिनाथ झा, डा. शैलेन्द्रमोहन झा, पं. गोविन्द झा के द्वारा इसके सम्यक् सम्पादन का प्रयास किया गया। लेकिन अतीत में कतिपय कारणवश अनेक स्थलों पर अपपाठ और भ्रान्तियाँ बचीं रहीं। यहाँ डा. शशिनाथ झा ने मूल पाण्डुलिपि एवं पूर्ववर्ती विद्वानों के द्वारा किये गये कार्यों के आधार पर इसका समेकित अध्ययन कर तीनों ग्रन्थों का पाठोद्धार तथा व्याख्या कर पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। फलतः यह विद्यापति के ग्रन्थों पर विमर्श करनेवाले शोधार्थियों एवं विद्वानों के लिए पठनीय एवं संग्रहणीय बन गया है।

डॉ० शशिनाथ झा



पिता - पं० गङ्गानाथ झा

पता - ग्राम+पो०-दीप,
भाया- झंझारपुर आर०एस०
जिला- मधुबनी-847403
मो०- 9199475909

जन्म तिथि - 15.2.1954

योग्यता - आचार्य (व्या०,सा०), एम.ए., विद्यावारिधि, विद्यावाचस्पति, पाण्डुलिपिविशेषज्ञ

अध्यापन - व्याकरणविभाग, का.सिं.द. संस्कृत विश्वविद्यालय, दरभंगा- 1979 से 2019 तक।
मध्य में- प्राचार्य, सं०म०वि०, लगमा- 1985-1994

सम्मान - 1. भाषासम्मान- साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली-2007
2. मिथिला विभूति- दरभंगा-2007
3. विद्यासागर- दिल्ली-2018
4. शैवभारती पुरस्कार- वाराणसी-2018

ग्रन्थ - संस्कृत, मैथिली एवं हिन्दी में लिखित एवं सम्पादित- 101 ग्रन्थ।

विशेष परिचय द्रष्टव्य : http://www.brahmipublication.com/dr-shashinth-jha/

मूल्य : ₹ 20.00

सम्पादक डा. शशिनाथ झा के आदेश से ई-बुक के रूप में प्रकाशित